चन्दामामा
अप्रैल १९७७
Rs 1·25

लूटो जेम्स का मज़ा
जीतने के लिए, १००१ मज़ेदार पुरस्कार!
नंबरवार दिये गए ५ चित्रों में से कौन सा चित्र
खाली जगह में होना चाहिए?
?
1
2
3
4
5
Cadbury's
MILK CHOCOLATE
GEMS
जल्दी करो!
अपना उत्तर, कॅड्बरिज़
ज़ेम्स के एक खाली प्लास्टिक
पैकेट के साथ भेजो। पहले १००१ सफल प्रतियोगियों को
११ रुपये मूल्य का स्टेट बैंक गिफ्ट चेक मिलेगा।
अपना उत्तर, नाम और पते के साथ केवल
अंग्रेज़ी में और बड़े (ब्लॉक) अक्षरों में लिखो।
प्रवेश-पत्र इस पते पर भेजो:
"लूटो जेम्स का मज़ा" डिपार्टमेंट B-21
पोस्ट बॉक्स नं. ४६, थाने ४००६०१
प्रवेश-पत्र पहुंचाने की अंतिम तिथि:
30-4-1977
चॉकलेट से भरे रंगीन कॅड्बरिज़ जेम्स
CHAITRA-C-69 HIN
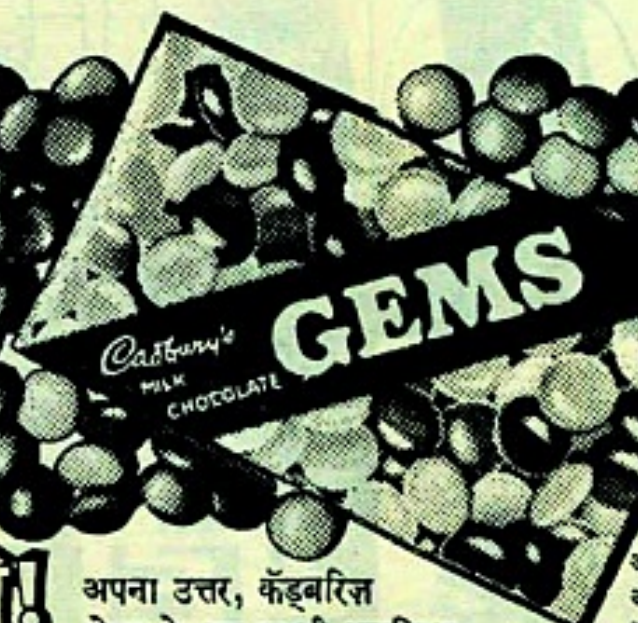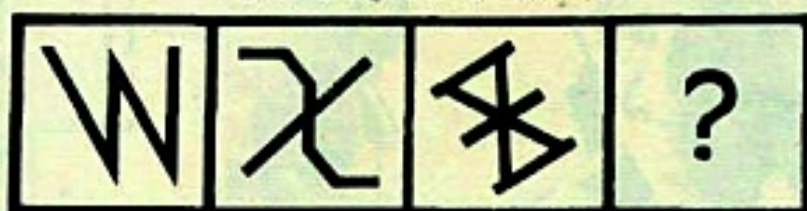
कौन है वह? सचमुच कृष्ण ही है?
...या फिर कोई बहुरूपिया?

वह तुम्हारे पास क्यों आया है, आनन्द?

मुमकिन है कि यह सिर्फ़ तुम्हारा ख़याल ही हो...

कोई सपना है या खुद तुम ही हो?

दरअसल वह तुमसे क्या चाहता है, आनन्द?

इन्सान के दिल में उठनेवाले विचारों के चढ़ाव-उतार का चित्रण यानी

बी. नागी रेड्डी की फ़िल्म

यही है ज़िंदगी

मनुष्य के आंतरिक भावों का सुस्पष्ट निरूपण— अहम् और परितोष के बीच संघर्ष की कहानी।

दिग्दर्शक : के. एस. सेथूमाधवन संवाद : इन्द्र राज आनन्द
गीत : आनन्द बक्षी संगीत : राजेश रोशन

विजया प्रॉडक्शन्स की अनूठी फ़िल्म

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इसके पूर्व हमने "झूठ" नामक जो समस्या दी थी, उसका सही उत्तर श्री ओंप्रकाश, पांडे टोला, अलीगंज, महानगर, लखनऊ का है। इनके नाम पर पुरस्कार की राशि १००/- शीघ्र भेजी जाएगी।

सही उत्तर यों है : जब दरबारी ने कहा कि उसने पुरस्कार जीत लिया है, उसने यह साबित किया कि उसका पहला कथन असत्य है। अगर वह झूठ है तो राजा के कथन को झूठा साबित करनेवाला सिद्ध हुआ। इसलिए राजा ने उसे पुरस्कार दिया। संयोग से दरबारी को पुरस्कार देकर राजा ने दरबारी के सत्य कथन को दूसरा झूठ साबित कर दिया।

वर्ष : २९ अप्रैल १९७७ अंक : ८

एक प्रति : १-२५ :: वार्षिक चन्दा : १५-००

अनुपायेन कर्माणि
विपरीतानि यानि च
क्रिय माणानि दुष्यंति
हवींष्य प्रयतेष्विव ॥ १ ॥

[उपाय विहीन कार्य अपात्र दान जैसे दोषकारक होते है ।]

यः पश्चात् पूर्वकार्याणि
कर्माण्यभिचिकीर्षति
पूर्वम् चापवकर्माणि
न स वेद नया नयौ ॥ २ ॥

[जो कार्य पहले करने हैं, वे पीछे तथा पीछे करनेवाले कार्य पहले करनेवाला व्यक्ति भला-बुरा नहीं जानता ।]

चपलस्य तु कृत्येषु
प्रसमीक्ष्याधिकम् बलम्
क्षिप्रमन्ये प्रपद्यंते
क्रौंचस्य ख मिव द्विजाः ॥ ३ ॥

[अधिक शक्ति के रहने के बावजूद भी चपल व्यक्ति के कार्य को देख दूसरे लोग मौक़ा देख उसे हराते हैं ।]

कार्य-विधि

मित्र-संप्राप्ति

[४५]

हिरण को छुड़ाने के लिए जो कौआ तथा चूहा गये, वे बड़ी देर तक वापस न लौटे। इस पर व्याकुल हो कछुआ धीरे-धीरे रेंगते हुए उस स्थान पर पहुँचा।

कछुए को पहुँचते देख कौआ घबरा उठा। शिकारी के आने पर कौआ उड़ सकता है, चूहा किसी बिल में घुस सकता है; हिरण भी भाग सकता है, मगर कछुआ उससे कैसे बच सकता है?

यों सोचकर कौआ कछुए से बोला– "तुम यहाँ आये ही क्यों हो? शिकारी के आने के पहले ही शीघ्र तुम यहाँ से चले जाओ।"

"मैं वहाँ पर बैठे-बैठे क्या कर सकता था? इधर हमारा मित्र हिरण खतरे में फँसा हुआ था, तुम दोनों बड़ी देर तक नहीं लौटे। इसलिए मेरा मन विकल हो उठा और मैं चला आया।" कछुए ने जवाब दिया।

वे लोग यों बात कर ही रहे थे कि कि शिकारी लौट आया। उसे देख कौआ ज़ोर से चिल्ला उठा। चूहे ने झट से हिरण के बंधन काट दिये, हिरण बीच-बीच में रुक-रुक पीछे दृष्टि डालते तेजी के साथ भाग खड़ा हुआ। कौआ उड़कर पेड़ पर जा बैठा, चूहा निकट के एक बिल में घुस पड़ा।

हिरण के भाग जाने पर शिकारी दुखी हुआ, पर कछुए को देख वह बड़ा खुश हुआ। उसने कछुए को पकड़ लिया। दाभ से उसे धनुष के साथ बांध दिया और अपने घर की ओर चल पड़ा।

शिकारी के द्वारा कछुए को ले जाते देख चूहा बड़ा दुखी हुआ। वह सोच

अंतिम पृष्ठ का चित्र

रहा था कि एक खतरा तो टल गया है, तभी दूसरा खतरा शुरू हो गया है। उसकी समझ में न आया कि उसे यों बराबर कष्ट क्यों झेलने पड़ रहे हैं। पहले तो उसकी सारी संपत्ति चली गयी, बाद को उसे अपने स्थान तथा मित्रों को छोड़ देना पड़ा, यह ज़िंदगी ही कुछ ऐसी है! चोट पर चोट लगती ही है।

इस बीच हिरण और कौआ लौट आये और दोनों ने कछुए की हालत पर अपना दुख प्रकट किया। पर चूहे ने उन्हें हिम्मत बंधाते हुए कहा–"दुख करने से कोई फ़ायदा नहीं है। मंधरक के हमारी आँखों से ओझल होने के पहले ही उसकी रक्षा करने का कोई उपाय करेंगे।"

"मेरे मन में एक उपाय सूझ रहा है। शिकारी के रास्ते में एक तालाब पड़ता है। वह जल्द ही तालाब के निकट पहुँच जाएगा। इस बीच निकट के रास्ते जाकर हिरण को मृत हालत में तालाब की मेंड पर लेट जाना होगा। मैं चूहे को अपनी पीठ पर चढ़ाकर उसे तालाब के पास ले जाऊंगा और उसे तालाब की मेंड़ पर उतार दूंगा। तब मैं हिरण के सर पर बैठकर ऐसा अभिनय करूँगा कि मैं उसकी आँख नोचकर खा रहा हूँ। इस दृश्य को देख शिकारी अपने मन मे सोचेगा कि हिरण मर गया है, तब वह कछुए के साथ अपये धनुष को मेंड पर रखकर हिरण के निकट पहुँचेगा, तब चूहा कछुए के बंधन

काटकर उसे मुक्त करेगा। कछुआ झट से तालाब में घुस जाएगा। शिकारी के निकट आते ही मैं उड़कर पेड़ पर जा बैठूंगा, हिरण उठकर भाग जाएगा। कहो, दोस्त! मेरी योजना कैसी है?" कौए ने समझाया।

"वाह, तुम्हारा उपाय अद्भुत है। यह चाल जरूर सफल होगी। समझ लो कि हमने कछुए की रक्षा कर ली है। ऐसा ही करेंगे।" उत्साह में आकर हिरण ने कहा।

इसके बाद निकट के रास्ते से जाकर हिरण तालाब की मेंड पर मृत हालत में लेट गया। कौआ चूहे को अपनी पीठ पर बिठाकर तालाब की मेंड पर पहुँचा, चूहे को उतारकर वह हिरण की आँख नोचने का अभिनय करने लगा।

थोड़ी देरी में शिकारी उस तालाब की ओर से गुजरा। हिरण को देख उसने सोचा कि वह थककर मर गया है। उसने कछुए को नीचे रखा और हिरण की ओर बढ़ा, उसी वक़्त चूहा दौड़ आया, कछुए के बंधन काटकर उसे मुक्त किया। कछुआ तालाब में कूद पड़ा।

इसके बाद शिकारी के निकट आते देख कौआ झट से उड़ा और पेड़ पर जा बैठा। हिरण उठकर तेजी के साथ भाग खड़ा हुआ।

शिकारी हताश हो कछुए के निकट लौटा। वहाँ पर कछुए को भी न पाकर वह विलाप करने लगा—"वाह री क़िस्मत, यह बड़ा हिरण मेरे जाल में फँस गया तो तुमने उसे बचाया, कछुआ मेरे हाथ लगा तो उसे भी तुमने छुड़वा लिया। बीबी-बच्चों को घर पर छोड़ जंगल में भटकनेवाला मैं खाली हाथ लौटकर उनके चेहरे कैसे देख सकता हूँ?" यों सोचते शिकारी चला गया।

शिकारी के जाने पर मित्रों ने बड़े ही प्यार से एक दूसरे का आलिंगन किया, फिर अपने निवास में जाकर सुखपूर्वक दिन बिताने लगे।

१८३. राक्षसी देवी

कोलंबिया के शान आगस्टस प्रांत की खुदाई में ऐसी प्रतिमाएँ उपलब्ध हुई हैं। इस देवी की उपासना करनेवाले आज कोई नहीं है। इस "दाढ़ों"वाली देवी के दायें हाथ में हथौड़ी जैसा उपकरण, बायें हाथ में शंख जैसी वस्तु तथा मुखमण्डल पर क्रोध दिखाई देते हैं।
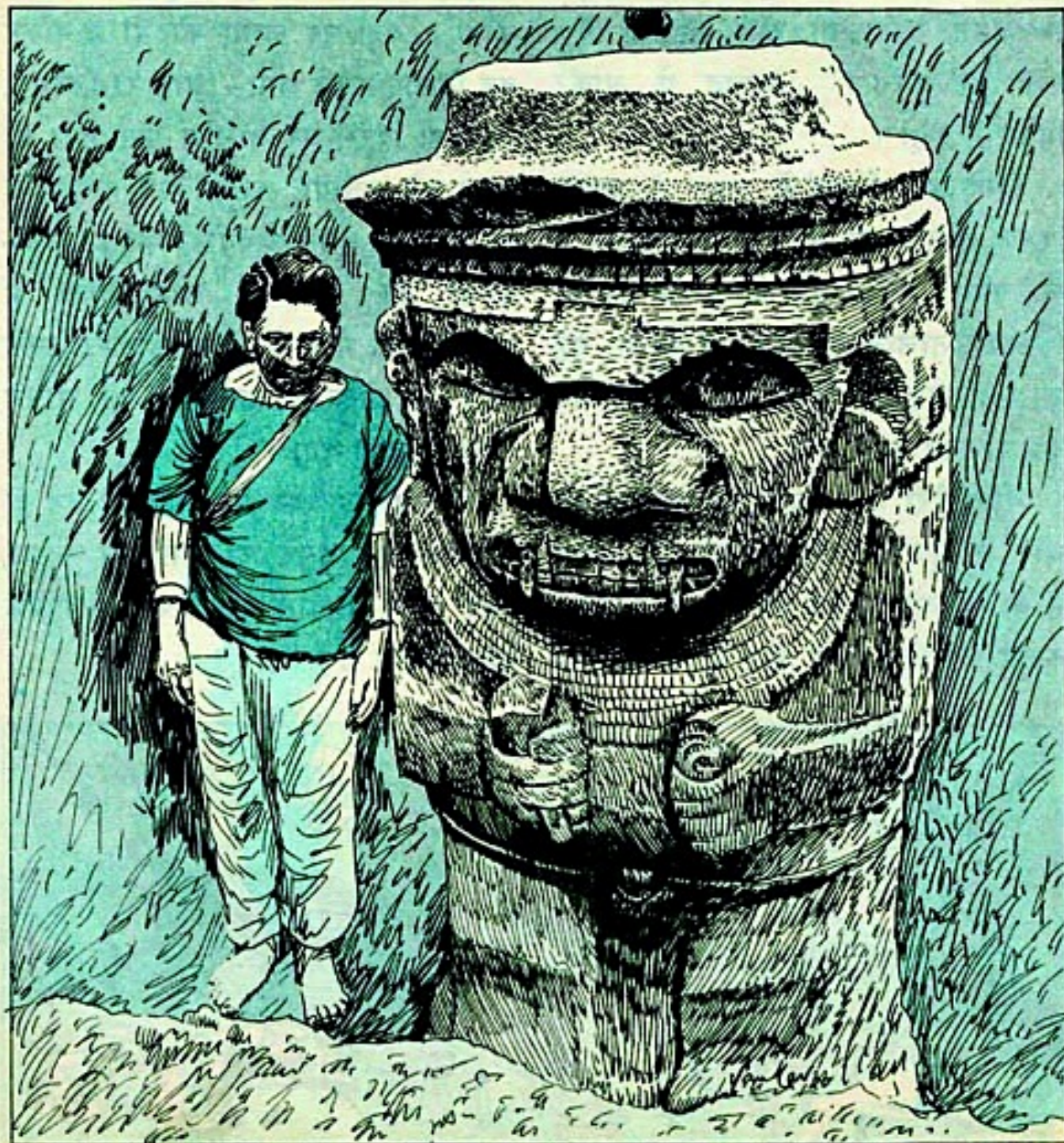
माया सरोवर

[१५]

[नाटी जाति की रानी का दुश्मन शंकरसिंह नर वानर को नियंत्रण रखने में मदद देने लगा। उस समय जयशील ने पहचान लिया कि नर वानर के साथ रहनेवाला व्यक्ति उसका दुश्मन कृपाणजित है। जयशील ने नर वानर पर बाण का प्रहार किया, उसी वक्त नाटा सेनापति अपने दल के साथ अपने दुश्मन पर हमला कर बैठा। बाद...]

नाटी रानी के सैनिक जब पहाड़ पर चढ़ने लगे, तब रानी के दुश्मन शंकरसिंह ने टीले के पीछे स्थित अपने अनुचरों को ऊपर आने का आदेश दिया। उसके नाटे अनुचर भाले हाथ में ले चिल्लाते पहाड़ पर आने लगे। उधर नर वानर पर नियंत्रण करने के लिए कृपाणजित तथा थोड़े से नाटे लोग नाना प्रकार के यत्न कर रहे थे।

जयशील ने पहाड़ पर आनेवाले शंकरसिंह के अनुचरों को देख सिद्ध साधक से कहा—"सिद्ध साधक, यदि हम रानी के सैनिकों की सहायता न करेंगे तो उसके शत्रु आसानी से उन्हें हरा सकते हैं। कृपाणजित को देखा है न? उसने एक जंगली जैसा वेष धारण किया है। फिर भी मैंने उसको पहचान लिया है। उसने भी शायद मुझे पहचान लिया हो!"

वानर की कमर में बंधी जंजीर पकड़े हुए था। नर वानर सीध में खड़े हो तलहटी की ओर देखते अपनी भुजाओं को ठोकते गरज रहा था।

"सिद्ध साधक! लगता है कि नर वानर फिर से उसके नियंत्रण मे आ गया है। इस बार पुनः वह जानवर चट्टान फेंकेगा तो रानी के सैनिकों में से आधे लोग मर जायेंगे। चलो!" यों कहते जयशील पहाड़ी की ओर दौड़ पड़ा, सिद्ध साधक ने उसका अनुसरण किया।

दोनों तेंजी के साथ पहाड़ की ओर थोड़ी दूर दौड़े, नाटी जाति के सेनापति से मिलकर बोले–"सेनापति, तुम अपने सैनिकों को थोड़ी देर के लिए आगे बढ़ने से रोक दो। वानर का फिर से तुम्हारे पैरों पर पत्थर फेंकने का खतरा है।"

सिद्ध साधक को भी ऐसा लगा कि उस वक़्त स्वयं जाकर रानी के सैनिकों की सहायता करने की नितांत आवश्यकता है। उसने रानी की ओर मुड़कर कहा–"रानीजी, आप का यहीं पर रहना हितकर है। हम आप के सैनिकों के साथ जाकर आपके शत्रु शंकरसिंह के साथ हमारे दुश्मन कृपाणजित का भी वध कर डालेंगे।"

साधक की बात पूरी न हो पाई थी कि इस बीच नर वानर जोर से गरज उठा। उस गर्जन को सुन जयशील और सिद्ध साधक ने पहाड़ी की ओर अपनी दृष्टि डाली। उस समय कृपाणजित अकेले नर

"महाशय, आप इस भयंकर जानवर तथा उसके साथ रहनेवाले महाकाय से हमारी रक्षा कीजिए। हम लोग पहाड़ पर खड़े हुए दुष्ट शंकरसिंह तथा उसके अनुचरों को भालों में चुभोकर पहाड़ की तलहटी में फेंक देंगे।" नाटे सेनापति ने कहा।

"वाह, तुम्हारे भाले की तरह तुम्हारी बातें भी बड़ी पैनी लगती हैं। लेकिन याद रखो कि तुम कोई देवता या राक्षस

नहीं हो कि जो संकल्प करे सो मिनटों में पूरा कर ले। तुम नाटे आदमी हो, समझें!" सिद्ध साधक ने क्रोध में आकर कहा।

जयशील ने साधक की ओर हाथ हिलाकर शांत रहने का संकेत किया। इस बीच नर वानर ने एक चट्टान उठाकर अपने हाथों में लिया। इसे देख सिद्ध साधक खीझकर बोला–"छी: छी:; लगता है कि यह नर वानर सिर्फ़ चट्टान फेंकना जानता है और कुछ नहीं! मैं अपने शूल से इसकी जान लेकर इसका पिंड छुड़ा लूंगा।" यों कहते शूल उठाकर नर वानर की ओर तेजी के साथ आगे बढ़ा।

जयशील ने भांप लिया कि सिद्ध साधक दुस्साहस करके जान पर मोल लेगा, तब उसे रोककर बाण संधान करके नर वानर पर छोड़ दिया। बाण का निशाना चूक गया और वह सीधे जाकर कृपाणजित के हाथ की जंजीर से जा लगा, जिससे कृपाणजित के हाथ की जंजीर छूटकर नीचे जा गिरी। दूसरे ही क्षण नर वानर चट्टान को नीचे गिराकर भागने को हुआ, मगर कृपाणजित ने चट से जंजीर जोर से खींचकर थाम ली और नर वानर को पीछे की ओर खींच लिया। उसी क्षण कृपाणजित ने अपने ऊपर बाण छोड़नेवाले अपने दुश्मन जयशील को अच्छी तरह से पहचान लिया।

जयशील को अपने सामने देख कृपाणजित भय एवं आश्चर्य के साथ कांप उठा। तब

तक वह केवल यही समझ रहा था कि वहाँ पर कोई साधारण मनुष्य आये हुए हैं; पर उसका जानी दुश्मन जयशील नहीं, सिद्ध साधक को तो उसने कभी देखा तक न था।

"शंकरसिंह! यह दुश्मन का अंत करने का वक़्त नहीं है। वह धनुषधारी दूर से ही हमारे प्राण ले सकता है। नर वानर तो जानवर ठहरा, इस कारण बाण के लगने पर भी वह निडरतापूर्वक ठहर सकता है। हम अगर बाण की वह चोट खाते, तो एकदम मर जाते।" कृपाणजित ने कहा।

शंकरसिंह ने एक बार जयशील तथा सिद्ध साधक पर दृष्टि प्रसारित की, तब कृपाणजित से बोला–"हे महाकाय! आप की आज्ञा का मैं तिरस्कार नहीं कर सकता। लेकिन क्या आप नर वानर के साथ उन पर अचानक धावा बोलकर उस धनुषधारी को मार गिरा नहीं सकते? हम इस बीच उस दुष्ट रानी के सैनिकों का पीछा करके उनको भालों के द्वारा मार गिरायेंगे।"

ये शब्द सुनकर कृपाणजित बिगड उठा। अपनी आँखें लाल-पीली करके नर वानर को टीले के नीचे की ओर खींच ले जाते हुए बोला–"शंकरसिंह! क्या तुम समझते हो कि मैं तुम्हारे सिर में शोभा देनेवाले परोंवाले पक्षी गीध हूँ? जैसे कि हवा में उड़कर उन पर हमला कर बैठूं? उनका वध करने के लिए एक और उपाय है। पहले तुम सब लोग अपने प्राणों के साथ हमारी बस्ती में भाग जाओ। समझे!"

शंकरसिंह ने दूसरे ही क्षण अपने अनुचरों को पहाड़ से उतरकर बस्ती में भाग जाने का आदेश दिया। इसके बाद कुछ ही क्षणों में भेड़ोंवाले सवार तथा भालेधारी भी ढलान की ओर चल पड़े। अपने दुश्मन को भागते देख जयशील ने नाटे सेनापति से कहा–"सेनापतिजी, तुम्हारे लिए यही अच्छा मौक़ा है। जो

भी शत्रु तुम्हें दिखाई देगा, उस पर भाले चलाओ, जो लोग दूर पर हैं, उन पर शिलाएँ लुढ़काकर उन्हें परलोक में भेज दो।"

अपने दुश्मन को भागते देख नाटे सेनापति की हिम्मत और बंध गई। उसने अपने सिपाहियों को चेतावनी देते हुए कहा–"अरे वीर-शूर गढ़वाली योद्धाओ, अरे शेरो, तुम लोग सिंह शावकों की भांति आगे बढ़कर गढ़वाली दल पर आक्रमण कर दो। भयंकर जानवर भागता जा रहा है। उससे अब हमें डरने की कोई ज़रूरत नहीं है।"

अपने नेता की चेतावनी पाकर नाटे सिपाही सब उत्साह में आ गये। वे सब लोग जोर से चिल्लाते हुए पहाड़ पर चढ़ने लगे। वहाँ पर उन लोगों ने थोड़े से भेड़ सवार तथा भाले धारियों को बन्दी बनाया। उन पर भालों का प्रहार करके घायल व्यक्तियों को पहाड़ के नीचे लुढ़कवा दिया। नाटा सेनापति अपने भाले को ऊपर उठाकर अपने वाहन को इधर-उधर दौड़ाते सिपाहियों में उत्साह भरने लगा।

उस समय जयशील तथा सिद्ध साधक वहाँ पहुँचे। उन्हें पहाड़ से उतरकर भागनेवाले शंकरसिंह के अनुचरों के साथ नर वानर को खींचकर ले जानेवाला कृपाणजित भी दिखाई दिया।

सिद्ध साधक ने शूल उठाकर गरजते हुए कहा–"जय, महाकाल की!" फिर जयशील से बोला–"जयशील, देखते क्या हो? चलो! शंकरसिंह की बस्ती टीले के नीचे पेड़ों की ओट में जो दिखाई देती है, वही है! अचानक धावा बोलकर कृपाणजित, उसके नर वानर तथा शंकरसिंह के नाटे अनुचरों के सर काटकर फेंक देंगे।"

सिद्ध साधक की बातें सुन जयशील मुस्कुरा पड़ा और बोला–"सिद्ध साधक! शत्रु की ताक़त का गलत अंदाजा लगाना

खतरे से खाली न होगा! उन्हें डरा-धमका कर पहाड़ पर से भगा देना अलग बात है और सीधे जाकर उनकी बस्ती पर हमला करके उन्हें मार डालने का प्रयत्न करना अलग बात है! साथ ही हमें शंकरसिंह के अनुचरों का वध करने की कोई जरूरत भी नहीं है! उनके तथा नाटी रानी के बीच समझौता कराने का प्रयत्न करेंगे। मैं यही बात सोच रहा हूँ।"

"तो हमारे शत्रु कृपाणजित का क्या होगा? उसके पालतू नर वानर की बात क्या होगी? उसकी मदद से वह दुष्ट आसपास के एक हजार कोसों की दूरी तक के प्रदेश का सम्राट बन सकता है न? हम देखते-देखते कैसे मौन रह सकते हैं?" सिद्ध साधक ने पूछा।

जयशील कोई उत्तर देने ही वाला था। तभी नाटा सेनापति उनके सामने आया और बोला-"महावीरो, आप की सहायता प्राप्त हो जाय तो अभी हम पहाड़ से उतर कर शंकरसिंह की बस्ती पर हमला करके अपने दुश्मन का सर्वनाश कर बैठेंगे! आप की क्या आज्ञा है?"

जयशील ने एक बार चारों ओर दृष्टि दौड़ाई और कहा-"सेनापति! तुम्हारा साहस प्रशंसनीय है! यहां पर तुम्हारे हाथ जो भी शत्रु आया, उसे मार डाला। बाक़ी लोग और नर वानर अपनी बस्ती में पहुँच गये हैं! अब वे लोग काफ़ी सावधान रहेंगे! यदि इस वक़्त हम हमला करेंगे तो नाहक़ खून खराबी के हमारी विजय निश्चित नहीं हो सकती!"

"तब तो आप ही आदेश दीजिए, हमारा आगे का कार्यक्रम क्या है?" नाटे सेनापति ने पूछा।

"तुम सब लोग टीले से उतर कर तुम्हारी रानी के पास जाओ। इसके बाद अपनी बस्ती की सुरक्षा का प्रबंध कर लो। हमारे जैसे दुश्मन ने भी यही विचार किया होगा। वे अचानक तुम

पर हमला कर न बैठे, इस बात के लिए सावधान रहो। हम दोनों शीघ्र ही तुम्हारी बस्ती में आ जायेंगे।" जयशील ने समझाया।

नाटे सेनापति ने अपने सिपाहियों में से एक को जयशील तथा सिद्ध साधक को मार्ग दिखाने के लिए नियुक्त किया, बाक़ी लोगों को साथ ले हर्षनाद करते पहाड़ से उतरकर नाटी जाति की रानी के निकट पहुँचा।

इसके बाद जयशील चुपचाप खड़े हो शंकरसिंह की बस्ती की ओर देखता रह गया। सिद्ध साधक थोड़ी देर जयशील को ताकता रहा, तब बोला—"जयशील! यह तुम क्या सोच रहे हो? हम ने नाहक़ इस नाटी जाति के लोगों के बीच आकर बड़ी गलती की।"

"हम जान-बूझकर तो यहाँ नहीं आये। इसका असली कारण तो वह मगरमच्छ आकृतिवाला मकरकेतु है! हम जल-प्रपात में फँसकर पहाड़ पर से प्राण बचाकर यहाँ पर पहुँचे। वैसे हम निकले थे हिरण्यपुर के राजा कनकाक्ष के बच्चों को ढूंढ़ने के लिए, लेकिन हमारा इस प्रकार जंगली लोगों के झगड़ों के बीच फँस जाना आश्चर्यजनक मालूम होता है। चाहे जो हो, हमारे इस प्रदेश से निकलने के पूर्व उस दुष्ट कृपाणजित को यमलोक में भेजना ही होगा।" जयशील ने कहा।

"महाकाल की कृपा से इस कार्य के साथ उस दुष्ट कृपाणजित के साथ रहनेवाले नर वानर को भी मारकर उसका चमड़ा निकालवाना होगा। अब चलो, पेट में चूहे दौड़ रहे हैं। नाटी जाति की रानी की बस्ती में चले चलेंगे।" इन शब्दों के साथ सिद्ध साधक चल पड़ा।

जयशील और सिद्ध साधक पहाड़ी टीले पर यों बात कर रहे थे, उधर पहाड़ के नीचे पेड़ों की ओट में खड़े हो नाटा शंकरसिंह तथा कृपाणजित अपनी इस पराजय के लिए एक-दूसरे की निंदा कर रहे थे।

"महाशय महाकाय! आप का शरीर भारी जरूर है, पर उसकी तुलना में आप का कलेजा हल्का है। आप ने हम से भी पहले भाग जाने का प्रयत्न किया। आप ने जिस नर वानर को पालतू बनाया, उसने आप ही को मार डालने का प्रयत्न किया है न।" शंकरसिंह ने कहा।

ये बातें सुन कृपाणजित रोष में आ गया। दांत किटकिटाते बोला-"अबे अंधे शंकर! मैं दुश्मन को देख भाग नहीं आया हूँ! मगर युद्ध करने का वह अच्छा मौक़ा न था, इसलिए केवल लौट आया। बस, यही बात है! मुझ पर बाण चलानेवाले मेरे जानी दुश्मन जयशील का कल प्रातःकाल तक वध न कर बैठूं तो मेरा नाम कृपाणजित नहीं है! सियार जित होगा; समझे! अब नर वानर की बात सुनो! वह एक बन्दर के बच्चे की तरह मेरे हर आदेश का पालन करेगा। इसका सबूत..." यों कहते नर वानर को शंकरसिंह को दिखाकर हाथ हिलाया।

नर वानर बिजली की गति के साथ जाकर शंकरसिंह को उठाकर भयंकर रूप से गर्जन करने लगा। अपने मालिक के प्राण खतरे में देख शंकरसिंह के अनुचर भाले उठाये चिल्लाते हुए नर वानर तथा कृपाणजित की ओर बढ़े। (और है)

बेवकूफ़ी के काम

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने पूछा—"राजन, मैं नहीं जानता कि आप ने यह आफ़त जान-बूझकर मोल ली या नहीं, लेकिन कुछ लोग जान-बूझकर ही आफ़तें मोल लेते हैं। हाथ लगनेवाले लाभ को लात मार देते हैं। ऐसी बेवकूफ़ी के काम करनेवालों में चन्द्रहास को उदाहरण के रूप में लिया जा सकता है। मैं उसकी कहानी सुनाता हूँ, श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: प्राचीन काल में रविवर्मा तथा शशिवर्मा नामक दो राजा अड़ोस-पड़ोस के राज्यों पर शासन करते थे। उन राज्यों के बीच चिरकाल से शत्रुता चली आ रही थी। जब-तब दोनों के बीच लड़ाइयाँ भी हो जाया करती थीं।

वेताल कथाएँ

रविवर्मा ने अपनी पुत्री के स्वयंवर की घोषणा के साथ शशिवर्मा के पुत्र चन्द्रहास को निमंत्रित करते हुए एक विशेष दूत को भी भेजा। दूत ने शशिवर्मा से बताया कि उसका राजा रविवर्मा शशिवर्मा के साथ संबंध जोड़ना चाहते हैं। उनका विचार है कि दोनों देशों के बीच चिरकाल से चली आनेवाली शत्रुता मिट जाय।

यह समाचार सुनकर शशिवर्मा बड़ा प्रसन्न हुआ। क्योंकि उसके तो इकलौता पुत्र है और साथ ही रविवर्मा की इकलौती पुत्री है। अगर यह विवाह हुआ तो चन्द्रहास दोनों देशों पर शासन कर सकता है। यों विचार करके शशिवर्मा ने चन्द्रहास को स्वयंवर में जाने के लिए प्रोत्साहित किया। वैसे चन्द्रहास उस स्वयंवर में भाग नहीं लेना चाहता था, लेकिन अपने पिता को वह अप्रसन्न भी करना नहीं चाहता था। इस कारण अपने मित्र सुबुद्धि को भी साथ ले वह रविवर्मा के राज्य की ओर चल पड़ा।

वे दोनों घोड़ों पर सवार हो एक जंगली मार्ग से होते हुए निकल पड़े, पर दुर्भाग्यवश रास्ते में एक जंगली दल के हाथ फंस गये। जंगली दल उन्हें अपने सरदार के पास ले गया।

सुबुद्धि ने जंगली दल के सरदार को समझाया कि वे कौन हैं और किस कार्य पर जा रहे हैं। इस पर सरदार ने गरजकर कहा—"चाहे तुम जो भी हो, हमें क्या मतलब? हमारी सीमा में प्रवेश करनेवाले हर विदेशी व्यक्ति को हम अपनी देवी की बलि देते हैं। यदि तुम लोग अपने प्राण बचाना चाहते हो तो तुम दोनों में से किसी एक को हमारे एक वीर योद्धा के साथ लड़कर विजयी होना होगा, तब तुम लोग अपने रास्ते जा सकते हो!"

"मैं तुम्हारे वीर योद्धा के साथ लड़ूंगा।" चन्द्रसेन ने कहा।

"इनके बंधन खोलकर इन्हें मुक्त कर दो। कल सुबह मैं लड़ाई का इंतज़ाम करूँगा।" जंगली सरदार बोला।

सरदार ने न केवल चन्द्रहास और सुबुद्धि को बंधन मुक्त कराया, बल्कि उस रात को उनके खाने व सोने का भी उचित प्रबंध कराया। रात को सुबुद्धि ने चन्द्रहास को सलाह दी–"हम यहाँ से भाग जायेंगे। यहाँ पर कोई पहरेदार भी नहीं है। कल सुबह तुम नाहक़ इन जंगली वीरों से क्यों लड़ना चाहते हो? ये लोग अत्यंत मजबूत और क्रूर भी होते हैं। इसमें क्या विश्वास है कि तुम्हीं विजयी होगे?"

"इस प्रकार कायर बनकर भाग जाने की अपेक्षा इनके हाथों में मर जाना कहीं उत्तम है। इन लोगों ने हम पर विश्वास करके ही तो हमें स्वेच्छापूर्वक छोड़ दिया है? इन्हें धोखा देने से बढ़कर कोई नीच कार्य हो सकता है? मेरी बात मान जाओ, हमें डरने की कोई बात नहीं है।" चन्द्रहास ने सुबुद्धि को समझाया।

दूसरे दिन सवेरे चन्द्रहास तथा एक जंगली योद्धा के बीच युद्ध हुआ। उसमें चन्द्रहास विजयी हुआ। जंगली सरदार ने चन्द्रहास तथा सुबुद्धि को उपहार देकर उनका सम्मान किया और भेज दिया।

अपना निमंत्रण पाकर स्वयंवर में आये हुए चन्द्रहास के ठहरने आदि का उचित प्रबंध किया राजा रविवर्मा ने। स्वयंवर के संदर्भ में विभिन्न देशों से आये हुए

राजकुमारों के बीच कई प्रतियोगिताएँ हुईं। चन्द्रहास सभी लोगों को हराकर विजयी हुआ। इस पर राजा रविवर्मा ने चन्द्रहास से कहा—"कल सुबह कमलनाभ नामक व्यक्ति के साथ तुम्हारी अंतिम प्रतियोगिता होगी। उसने अब तक किसी भी प्रतियोगिता में भाग नहीं लिया है। तुम दोनों में से जो विजयी होगा, उसी के साथ मेरी कन्या का विवाह करूंगा।"

ये बातें सुनने पर सुबुद्धि का क्रोध भड़क उठा, पर वह मौन रह गया। बाद को जब अपने निवास में पहुँचे, तब उसने चन्द्रहास से पूछा—"आखिर इस राजा का उद्देश्य क्या है? तुमने सभी लोगों को प्रतियोगिताओं में हराया है। राजा को चाहिए था कि अपनी कन्या के साथ तुम्हारा विवाह आज ही कर देते। लेकिन फिर किसी के साथ तुम्हारी प्रतियोगिता क्यों रखना चाहता है? क्या पूछ लूं?"

"तुम्हें पूछने की कोई आवश्यकता नहीं है। मैं सारी हालत समझ गया हूँ।" चन्द्रहास ने उत्तर दिया।

उस दिन अर्द्ध रात्रि के समय चन्द्रहास ने सुबुद्धि को जगाया और कहा—"चलो, कल प्रातःकाल तक हमें इस राज्य की सीमा को पार कर जाना होगा।"

ये बातें सुनने पर सुबुद्धि की नींद की खुमारी जाती रही, उसने चन्द्रहास की ओर आश्चर्य भरी दृष्टि दौड़ाकर कहा—"यह तुम क्या कहते हो? कल सुबह अंतिम प्रतियोगिता में भी विजयी होकर राजकुमारी के साथ क्या विवाह न करोगे? हाथ लगनेवाले फल को क्यों फेंक देना चाहते हो?"

चन्द्रहास ने सुबुद्धि की बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया। इस पर वे दोनों अपने घोड़ों पर सवार हो वहाँ से चल पड़े। दूसरे दिन दुपहर तक वे सकुशल अपनी राजधानी में पहुंच गये।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजन, क्या चन्द्रहास बेवकूफ़ है? या दुस्साहसी अथवा कायर है? इसके पूर्व

जंगली लोगों के बीच से भागने के बजाय, उसने लड़ने के लिए क्यों मान लिया? उस युद्ध में यदि वह हार जाता तो उसका क्या होता? स्वयंवर की सभी प्रतियोगिताओं में विजयी होकर एक प्रतियोगिता के और होते देख वह अंधेरे में क्यों भाग गया? इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया: "चन्द्रहास बुद्धि, साहस, उदारता और आत्मविश्वास रखनेवाला युवक है। तुमने जो अवगुण बताये, उनमें से एक भी उसके भीतर देखे नहीं जा सकते। उसने जंगली दल के लोगों की सच्चाई पर प्रसन्न होकर उन लोगों की भांति अपने वचन का अक्षरश: पालन किया। मगर उसे पहले ही मालूम हो गया था कि रविवर्मा विश्वासघातक है। जब उसने अपनी पुत्री के स्वयंवर पर प्रतियोगिताओं का प्रबंध किया, तब उसे विशेष रूप से दूत के द्वारा निमंत्रण भेजने की क्या जरूरत थी? इसके पीछे अवश्य कोई षड़यंत्र होगा! उसने पहले ही सोच रखा था कि किसी भी तरह से चन्द्रहास का वध किया जाय तो उसे शशिवर्मा का राज्य हस्तगत होगा। इस प्रकार अपने दादा-परदादा जो कार्य न कर पाये, वह उसके द्वारा संपन्न हो सकता है—यों विचार किया होगा। इस बात को चन्द्रहास ने भांप लिया, पर सुबुद्धि इसे समझ न पाया। फिर भी चन्द्रहास अपने को कायर नहीं कहलाना चाहता था, इसलिए सभी प्रतियोगिताओं में भाग लेकर विजयी बना। अंतिम प्रतियोगिता रविवर्मा के षड़यंत्र की थी। वह प्रतियोगिता धोखा देकर चन्द्रहास का अंत करने के लिए ही हो सकती है। यह अवसर राजा रविवर्मा को चन्द्रहास देना नहीं चाहता था। इसी कारण वह अर्द्ध रात्रि के समय रवाना हो चला गया।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

चोर का बेटा

एक गांव में भीखमदास नामक एक चोर था। उसके नाम से ही आस-पास के गांव के लोग थर-थर कांप उठते थे। वह बड़ी निर्दयता के साथ प्राण लेता था। उससे बचने के लिए बड़े-बड़े धनी लोग भारी रक़म उसे सौंपा करते थे।

भीखमदास ने इस तरह अपार सोना जमा कर रखा। उसके मंगाराम नामक एक बेटा था। मंगाराम अपने बाप से बढ़कर हिम्मतवर था। जब मंगाराम सोलह साल का हुआ तब भीखमदास ने उसे चोर विद्या सिखाई। भीखमदास यह सोचकर गर्व किया करता था कि उसका पुत्र उससे बढ़कर बड़ा डाकू बन जाएगा।

एक दिन भीखमदास चोरी करने निकला, तब अपने बेटे को भी साथ चलने को कहा। मगर मंगाराम को अपने बाप का पेशा बहुत ही बुरा लगा। उसने अपने बाप से कहा भी—"तुम्हारी तरह चोरियां करते लुक-छिपकर डरते हुए जीना मैं पसंद नहीं करता, अलावा इसके तुमने काफ़ी धन कमा रखा है, और क्यों इसी पेशे को पकड़कर लटक रहे हो? इसे छोड़ दो।"

ये शब्द सुनकर भीखमदास चौंक पड़ा और बोला—"तुम तो निरे कायर मालूम होते हो। मैं चोरियां इसलिए नहीं करता कि मेरे लिए भर पेट खाना नहीं है। यह तो अपने दादा-परदादा के जमाने से चले आनेवाला पेशा है। एक जमाने में मेरे दादा के नाम से तिजोरियां तक थर-थर कांप जाती थीं। मेरे घर पैदा होकर इस तरह कायर की भांति बकना मैं बिलकुल सहन नहीं कर सकता। बित्ते पर पेट भरने के लिए जी तोड़ मेहनत करना तो नालायक़ों का काम है। हम तो

हिमांशु राय

कई पीढ़ियों से दुनिया की नज़र में चोर हैं। अब हम अचानक यह कहे कि हम भले आदमी बन गये हैं तो हम पर हसेंगे।"

इस पर मंगाराम बोला–"अगर तुम चाहते हो कि तुम्हारा वंश शाश्वत रूप से इसी पेशे को अपनाये रखे तो इससे बढ़कर कोई बेवकूफ़ी की बात न होगी। यह पेशा सदा के लिए रह नहीं सकता, खतम हो जायगा, दिन बदलते जा रहे हैं।"

"तब तो तुम अपनी जिंदगी आप जिओ, तुम्हें कभी न कभी मेरे रास्ते पर लौटकर आना ही होगा।" भीखमदास ने मंगाराम से कहा। मंगाराम को अपने पिता को बदलने का कोई उपाय न सूझा। उसने घर त्यागकर अपनी शक्ति के बल पर जीने का निश्चय किया। मगर चोर का पुत्र होने के कारण मंगाराम को किसी ने पास तक पटकने नहीं दिया। इस पर वह बड़ा दुखी हुआ।

घर लौटे अपने बेटे को देख भीखम ने पूछा–"क्यों बेटा? ईमानदारी के साथ जीने का कोई रास्ता तुम्हें मिल गया?"

"जो लोग यह जानते हैं कि तुम चोर हो, वे मुझे अपने पास कैसे पटकने देंगे? मुझे तुम्हारा पुत्र कहने में लज्जा हो रही है। इसलिए मैं ऐसी जगह जाना चाहता हूँ जहाँ के लोग हम दोनों को बिलकुल नहीं जानते हैं।" मंगाराम ने कहा।

"अच्छी बात है! ऐसा ही करो बेटा! चार-पांच दिन भूखे रह जाओगे तो तुम्हीं
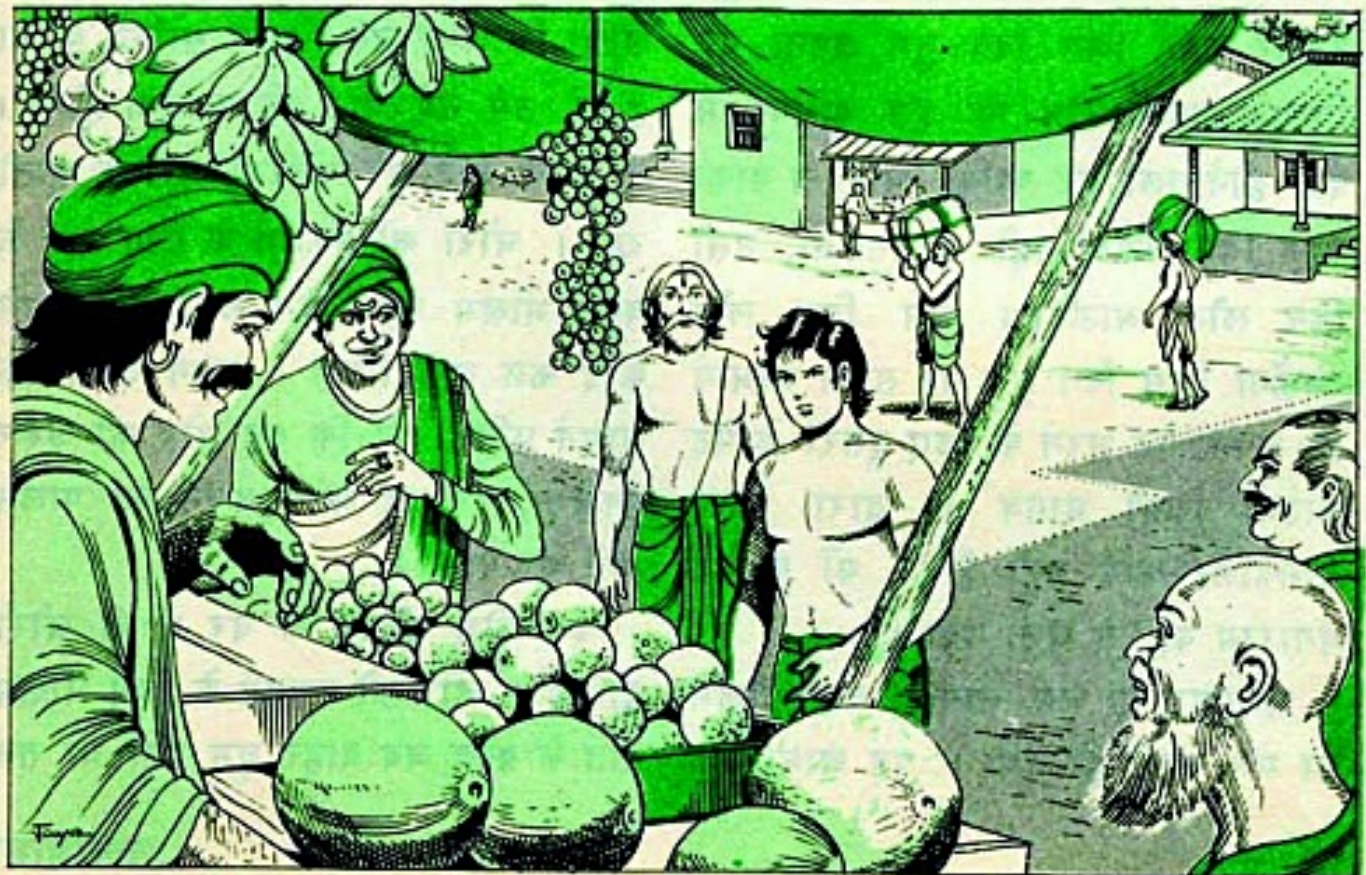
वापस लौट आओगे।" भीखम ने कहा। "लौटकर जरूर आऊँगा, मगर भूखे रहकर नहीं, जिस दिन तुम अपना यह विचार बदल लोगे कि इस दुनिया में पैदा होनेवाला हर व्यक्ति चोरी व डाका डाले बिना जिंदा नहीं रह सकता, उसी दिन लौट आऊँगा। उस दिन लौट आऊँगा जिस दिन तुम यह समझ जाओगे कि अपना पेट भरने के लिए दूसरों के पेट काटना किसी मानव के द्वारा किया जानेवाला कार्य नहीं है।" यों कहकर मंगाराम वहाँ से चला गया।

मंगाराम के चले जाने के बाद भीखम का मन भारी हो गया। वह खाना तक न खा पाया। उसने चोरियाँ करना बंद किया। लोगों ने भीखमदास में बहुत बड़ा परिवर्तन देखा। धीरे-धीरे लोगों में चोरों का डर जाता रहा।

मगर इस बीच एक व्यापारी के घर में लाखों रुपयों के गहनों की चोरी हो गई। यह समाचार मिलने पर भीखम चकित रह गया। यह चोरी भीखम ने नहीं की थी। मगर लोग उसी पर संदेह करेंगे। भीखम ने व्यापारी के घर जाकर समझाया कि उसने यह चोरी नहीं की है।

परंतु भीखम की बातों पर किसी ने विश्वास नहीं किया। कई सालों से भीखम की जानकारी के बिना उस प्रदेश में कोई चोरी नहीं हुई थी। इसलिए भीखम ने सोचा कि अगर उसे निर्दोष साबित करना है तो उसे नये चोर को पकड़ना होगा।

इसके बाद भी चोरियाँ बराबर होती रहीं। चोरों को पकड़ने के लिए रात के वक़्त भीखम पहरा देने लगा, मगर उसे कोई फल नहीं मिला। उसने जनता के सामने प्रतिज्ञा की कि वह चोर को ज़रूर पकड़ेगा, पर वह अपने वचन का पालन नहीं कर पाया।

इस बीच भीखम के घर में ही चोरी हो गई। चोर को पकड़ने के लिए भीखम रात के वक़्त जब बाहर घूम रहा था तब

चोर ने उसके घर में प्रवेश करके उसके घर को लूट लिया। यह बात मालूम होते ही भीखम दौड़े-दौड़े अपने घर पहुँचा, उसने देखा कि उसकी पत्नी के हाथ-पैर बांधकर चोर सारा माल लूट ले गये हैं। भीखम ने कई वर्षों से चोरियाँ करके जो कुछ जमा कर रखा था, सब लुट गया था।

यह खबर मिलते ही गाँव के लोगों की शंका जाती रही। धनियों ने उसके प्रति सहानुभूति दिखाई। पर भीखम जानता था कि वह सच्ची सहानुभूति नहीं है, बल्कि वे लोग अपनी खुशी जता रहे हैं।

सब कुछ खोने के बाद भीखम ने फिर से अपना पेशा चालू रखना चाहा, उसने धनियों के पास जाकर पूछा कि उसे पहले जो धन दिया जाता था, वह पूर्ववत दिया करें, ऐसी हालत में वह उनके घरों में चोरी नहीं करेगा। सब ने यही कहा— "फिर से यही बात अपने मुँह से निकालोगे तो तुम्हारी चमड़ी उधेड़ देंगे।"

एक जमाना था, कोई भीखम के सामने ऐसी बात कहता तो उसकी जान ले लेता। ऐसा व्यक्ति अब उनकी बातें सुनकर घबरा गया। इस परिवर्तन का कारण भीखम समझ न पाया।

उसी रात को वह अपनी पत्नी के साथ अपने गाँव को छोड़ कहीं जाने का निश्चय करके चल पड़ा। थोड़ी दूर जाने पर मंगाराम भीखम के सामने से आते दिखाई दिया। भीखम ने अपने पुत्र के साथ
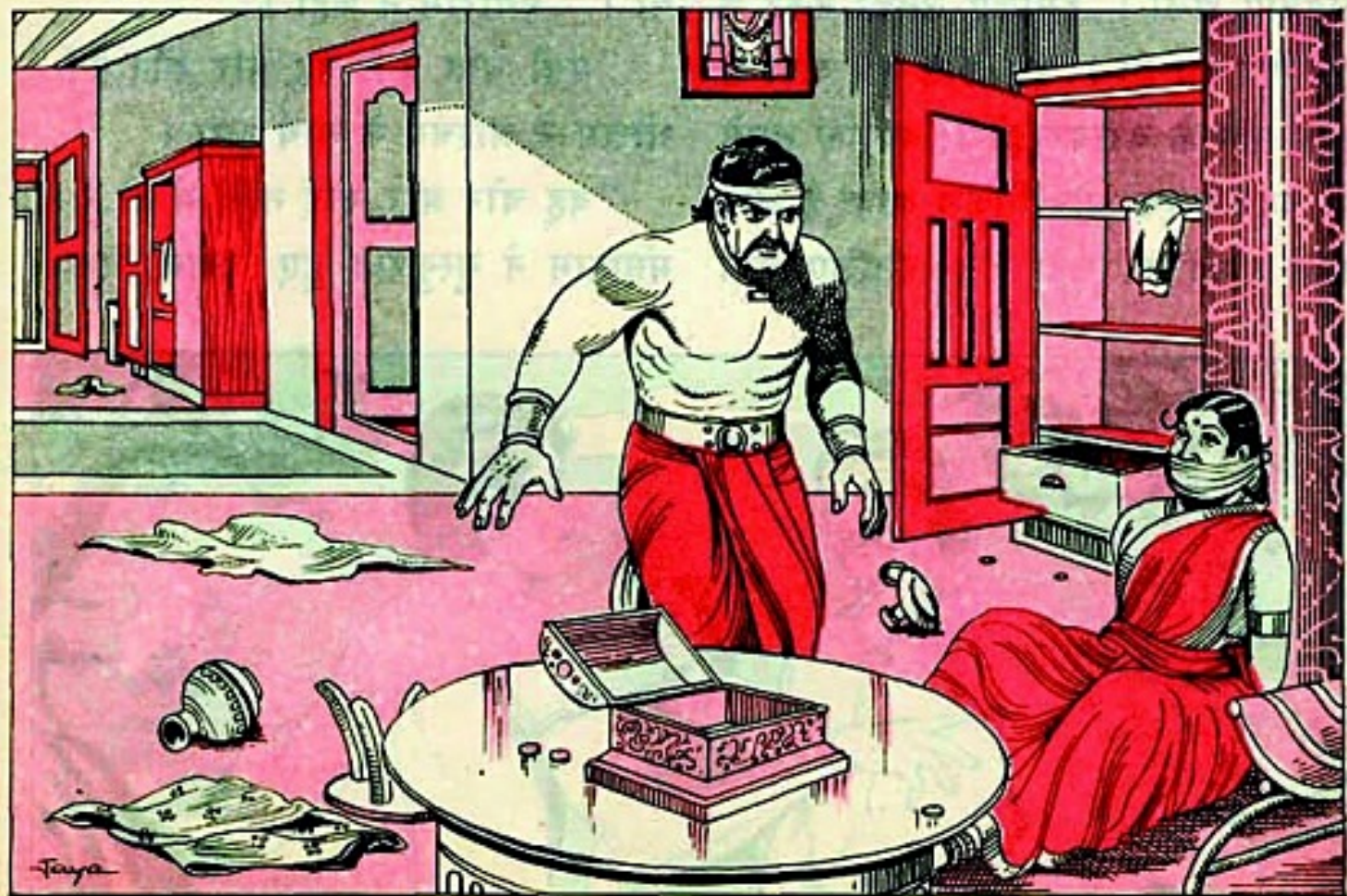
आलिंगन करके उसे सारा हाल कह सुनाया।

मंगाराम ने मुस्कुराकर कहा—"पिताजी, तुम दुखी मत होओ। गाँववालों ने तुम्हें प्राणों के साथ छोड़ दिया है। मेरे घर चलो। वहाँ पर तुम आराम से अपना शेष जीवन बिता सकते हो!"

"बेटा, मेरी समझ में नहीं आता कि जो लोग पहले मुझे देख थर-थर कांप उठते थे, मुझे अब वे एक कुत्ते के बराबर दुतकार रहे हैं।" भीखम ने कहा।

"जब तक तुम्हारे पेशे के प्रति आदर और विश्वास था, तब तक धनी लोग तुम्हें देख कांप उठते थे। तुमने जनता को यह विश्वास दिलाने के लिए कि तुम इस समय चोरी नहीं कर रहे हो, अनेक यातनाएँ झेलीं। इसलिए उनकी नजर में तुम गिर गये हो। इस वक़्त तुम दाढ़ों से मुक्त साँप के बराबर हो। क्योंकि तुमसे भी बढ़कर एक चोर निकल आया है और उसने तुम्हीं को लूटा है। इसलिए धनी लोग उपहार देंगे तो उसे ही देंगे, तुम्हें क्यों देंगे? आखिर तुम्हारे भीतर अब कौन सी ताक़त है? तुम अपने पेशे से दूर हो गये हो। वास्तव में इस पेशे का लक्षण ही यही है। समाज के लिए जो व्यक्ति बोझा बन जाता है उसका पतन निश्चित है।" मंगाराम ने समझाया।

"तुमने पहली बार जब यह बात मुझे समझाई, तब वह बात मेरे दिमाग में नहीं घुसी। इस नये चोर ने न केवल मेरा पेट काटा, बल्कि मेरी आँखें भी खोल दी हैं। आइंदा मैं चोरी नहीं करूँगा, बल्कि मेहनत करके जीऊँगा।" भीखम ने कहा।

"वास्तव नया चोर सच्चा चोर न था। वह केवल तुम्हारे भीतर मानसिक परिवर्तन लाने के लिए ही निकल आया था।" मंगाराम ने कहा।

"ऐसी बात है? वह चोर कौन है?" भीखम ने आश्चर्य के साथ पूछा।

"वह चोर और कोई नहीं, मैं ही हूँ।" मंगाराम ने मुस्कुराते हुए जवाब दिया।

राजा से भी बड़ा व्यक्ति

विशाल देश के राजा उदारसेन ने अपनी प्रजा की भलाई करने के हेतु अनेक बढ़िया कानून बनाये, मगर उन कानूनों के द्वारा साधारण जनता की जिंदगी में कोई परिवर्तन नहीं आया, बल्कि देश-भर में गरीबी का तांडव नृत्य हो रहा था। पर राजा की समझ में नहीं आया कि आखिर इसकी वजह क्या है? इसका पता लगाने के लिए राजा ने अपने अंतरंग सलाहकार रक्तवर्ण को नियुक्त किया।

रक्तवर्ण जनता के बीच एक साधारण व्यक्ति के रूप में जिंदगी बिताने लगा। इस प्रकार उसने अनेक रहस्यों का पता लगाया। वह यह कि देश के कतिपय धनी व्यक्ति तथा प्रभावशाली लोग राज कर्मचारियों को अपने हाथ का खिलौना बनाकर जनता के प्रति अन्याय कर रहे हैं! लेकिन उन अन्यायों को प्रकट करने की हिम्मत किसी में न थी। क्योंकि जो लोग अन्याय कर रहे थे, वे राजा के प्रमुख सलाहकार ही थे।

इस रहस्य का पता जब रक्तवर्ण को लग गया, तब तक यह बात देश के धनी लोगों को भी मालूम हो गई। धनी लोगों ने रक्तवर्ण को अपने यहाँ बुलवाकर समझाया कि वह राजा को उन लोगों के संबंध में अच्छी राय दे। रक्तवर्ण को भी मालूम हो गया कि यदि वह धनियों की सलाह का पालन न करेगा तो उसके तथा उसके परिवार के लिए खतरा उपस्थित हो सकता है।

उसने राजा की सेवा में पहुँचकर अपने अनुभवों का श्लेषार्थ में यों परिचय दिया—"महाराज, मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि देश में अकाल क्यों पड़ रहे हैं और गरीबी क्यों दिन ब दिन बढ़ती जा रही

धनियों के नाम अभिनंदन-पत्र भेजें। अपने पक्ष में सुझाव देने के उपलक्ष्य में धनियों ने रक्तवर्ण के पास भारी रक़म पुरस्कार के रूप में भेज दी।

उन्हीं दिनों में विशाल देश में वर्षा न होने की वजह से फ़सलें पैदा नहीं हुईं और अनाज के अभाव में जनता नाना प्रकार की यातनाएँ झेलने लगी।

उस हालत में राजा उदारसेन ने रक्तवर्ण को बुला भेजा और पूछा–"तुमने एक बार मुझसे कहा था कि हमारे राज्य में कंकड़ों को चावल के रूप में बदलने की क्षमता रखनेवाले लोग हैं। अब मुझे उनकी जरूरत आ पड़ी है। क्या तुम उन्हें मेरे पास बुला ला सकते हो?"

"महाराज! इस कार्य को संपन्न करने में धनगुप्त ही समर्थ व्यक्ति हैं। मेरा विश्वास है कि आप उनसे वार्ता करे तो वे इनकार नहीं कर सकते।"

राजा का संदेशा पाकर धनगुप्त अत्यंत उत्साह के साथ राजा की सेवा में आ पहुँचा। इस पर राजा ने कहा–"धनगुप्त! तुम्हारी शक्ति एवं सामर्थ्य पर आज हमारे देश की खाद्य समस्या निर्भर है। देश में अनाज का अभाव है। मैं तुम्हें दस मजदूर दूंगा। वे तुम्हें कंकड़ बनाकर देंगे। उनकी मदद से तुम्हें हमारे नील

है। हमारे देश में अनेक प्रकार के समर्थ व्यक्ति हैं। कुछ लोग कंकड़ों को चावल के दाने के रूप में बदल सकते हैं, कुछ पानी को दूध का रूप दे सकते हैं। कुछ लोग एक देवी की मदद से दूसरी देवी के द्वारा सेवावृत्ति करा सकते हैं। यहाँ तक कि हमारे देश में महासागर के लिए बांध बनवा सकने की क्षमता रखनेवाले लोग हैं। मुझे लगता है कि आप के शासन में ऐसे समर्थ व्यक्तियों के होते अधिक दिन तक गरीबी क़ायम नहीं रह सकती।"

रक्तवर्ण की ये बातें सुन राजा उदारसेन बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने रक्तवर्ण का सत्कार किया और देश के सभी

पर्वत को चावल के रूप में बदलना होगा।"

धनगुप्त ने विस्मय में आकर पूछा— "महाराज! यह कैसे संभव है?"

राजा ने खीझकर कहा—"तुम मेरे साथ नाहक़ चर्चा न करो। जाकर अपना काम करो।"

इस पर धनगुप्त ने साहस करके कहा— "महाराज, लगता है कि आप से किसी ने झूठ कह दिया है। कंकड़ों को चावल के रूप में बदननेवाला व्यक्ति इस पृथ्वी पर अब तक कोई पैदा हुआ न होगा।"

ये बातें सुन रक्तवर्ण पर राजा बिगड़ पड़े। पर रक्तवर्ण ने विचलित हुए बिना यों कहा—"महाराज, न मालूम क्यों, धनगुप्त सचाई को छिपा रहे हैं। उनके द्वारा कंकड़ों को चावल के रूप में बदलते मैंने अपनी आँखों से देखा है। ऐसे कंकड़ ये चन्द्रवर्मा के यहाँ से खरीद लेते हैं।"

ये शब्द सुनकर धनगुप्त सहम गया। राजा को लगा कि इसमें कोई राज है। उसी वक़्त धनगुप्त तथा रक्तवर्ण को अपने साथ ले जाकर राजा ने सच्ची बात जान ली। धनगुप्त चन्द्रवर्मा के यहाँ से चावल के परिमाणवाले कंकड़ खरीदकर चावल के नौ बोरों में एक बोरा कंकड़ के हिसाब से मिला देते हैं।

"महाराज, धनगुप्त एक बोरे कंकड़ नौ बोरे चावल में मिलाकर दस बोरे चावल बना रहे हैं। आप ने धनगुप्त की सामर्थ्य को देख लिया है न?" रक्तवर्ण ने राजा से पूछा।

"ओह, इसकी सामध्य यह है?" यों कहते राजा ने उसी वक़्त धनगुप्त को कारागार में भेजा।

इसके बाद राजा ने रक्तवर्ण से पूछा— "इसी प्रकार तुम्हारी और बातों में भी कोई गूढ़ अर्थ है। फिर साफ़-साफ़ बतला दो।"

रक्तवर्ण ने यों समझाया: "महाराज, दूध में पानी मिलाकर बेच दे तो इसका

मतलब हुआ कि पानी को दूध के रूप में परिवर्तित किया गया है। हमारे देश के सभी व्यापारी इसी प्रकार सभी चीज़ों में मिलावट कर रहे हैं। धनी व्यक्ति लक्ष्मी देवी की कृपा से सरस्वती देवी की कृपापात्र शिक्षितों के द्वारा सेवक-वृत्ति करा रहे हैं। वे जनता का शोषण कर रहे हैं, फिर भी जनता विद्रोह नहीं कर पा रही है। इसका मतलब यह हुआ कि ये धनी प्रजा-समुद्र पर बांध बांधकर उसके द्वारा फ़ायदा उठाकर और धनी बनते जा रहे हैं।"

ये बातें सुन राजा आश्चर्य में आ गये। उन्होंने रक्तवर्ण को डांटकर कहा—"हमारे देश में इतने सारे अन्याय हो रहे हैं; फिर भी मैंने तुम्हें जो जिम्मेदारी सौंप दी, उसे भूलकर तुम आराम से बैठे हुए हो?"

"महाराज! मैं कर क्या सकता हूं? आप ने जो कानून बनाये, उनका उल्लंघन करनेवालों को भारी दण्ड देने की व्यवस्था भी है। लेकिन मैंने जिन लोगों को अपराधी पाया, वे सब कानून का उल्लंघन करनेवाले ही हैं। फिर भी उन्हें कोई दण्ड नहीं दिया गया है। इसलिए मैंने सोचा कि वे लोग आप से भी बढ़कर बलवान व्यक्ति हैं, इसीलिए मैं सीधे शब्दों में उनके अपराधों का जिक्र नहीं कर पाया।" रक्तवर्ण ने समझाया।

"हां, तुम ठीक कहते हो! कानून का उल्लंघन करके भी जो लोग दण्ड नहीं पाते, वे राजा से भी बलवान होते हैं। ऐसे लोग हमारे देश में अनेक हैं। इसलिए इस देश की हालत ऐसी बनी हुई है। इस त्रुटि को हमें दूर करना होगा।" इन शब्दों के साथ उदारसेन ने तत्काल कठोर कार्रवाई की। अपराधियों को कारागार में भिजवाया। अपने सारे कानूनों को सही ढंग से अमल करने की व्यवस्था का भार स्वयं अपने ऊपर लिया और इस प्रकार राजा शीघ्र ही अपने देश की गरीबी को हटा सके!

बरगद का आक्रमण

वज्रगिरि का राजा अत्यंत बलवान था। उसने अनेक राज्य जीतकर अपने राज्य का विस्तार किया। अपने पिता की राज्यकांक्षा राजकुमार रत्नपाल को पसंद न आई।

एक दिन रत्नपाल ने शिकार खेलने जाते हुए नगर के बाहर लंबी जटाओंवाले बरगद को देखा। उसे देखते ही रत्नपाल को अपने पिता की याद आई। बरगद की जटाएँ जितनी दूर फैली थीं, उस प्रदेश में एक भी पौधा पनप नहीं सकता। यों सोचकर रत्नपाल ने उस बरगद को कटवाकर जला डाला और उस प्रदेश में अनेक पौधे रोपवा दिये।

थोड़े दिन बाद उधर से गुजरते हुए रत्नपाल ने देखा, वहाँ पर एक भी पौधा न था। बरगद की छाया में खेलते, उसकी जटाओं पर झूलते खेलनेवाले मवेशियों ने उन पौधों को उखाड़कर फेंक दिया था।

रत्नपाल को अपनी भूल मालूम हुई। उसने वहाँ पर एक और बरगद का पौधा रोपवा दिया, उसके चारों तरफ़ बाड़े का प्रबंध किया और उस दिन से अपने पिता के साथ द्वेष करना छोड़ दिया।

उपहार

एक गांव में एक शिकारी था। वह खूंख्वार जानवरों को प्राणों के साथ पकड़ लाता, पिंजड़ों में लाकर राजा तथा अजायब घरों को बेचकर बहुत सारा धन कमा लेता।

एक दिन उस शिकारी के यहाँ पंद्रह साल का एक लड़का आया और बोला–"इस गांव में एक औरत है। हर शुक्रवार को उसमें किसी शक्ति का प्रवेश होता है, तब उसके मुँह से कालीमाता बोलती है। उस दिन दूर दूर से भक्त आकर उसे अनेक प्रकार के उपहार समर्पित करते हैं। पर यह सब स्वांग है। इसे प्रकट करने के लिए तुम्हें एक काम करना होगा।"

"बोलो, वह क्या काम है?" शिकारी ने पूछा।

लड़के ने अपना उपाय शिकारी को बताया।

दूसरे शुक्रवार को शिकारी गंगाबाई नामक औरत के घर पहुँचा। गंगाबाई में शक्ति का प्रवेश हो चुका था। उसके चारों तरफ़ कई भक्त थे। उनके द्वारा समर्पित उपहार एक ओर रखे गये थे।

शिकारी गंगाबाई के चरणों पर गिरकर बोला–"माईजी, मुझे माफ़ कर दो। आज तक मैंने तुम पर विश्वास किये बिना बड़ा पाप किया है। तुम्हें प्रत्यक्ष देखने के बाद मेरी आँखें खुल गईं। मैं अगले शुक्रवार को ऐसा उपहार दूंगा, आज तक किसी भक्त ने तुम्हें ऐसा उपहार समर्पित न किया होगा। उसे स्वीकार करके मुझ पर अनुग्रह करना होगा; माताजी!" गंगाबाई ने उस नये भक्त को आशीर्वाद दिया। शिकारी के चले जाने पर भक्तों के बीच बड़ा कुतूहल पैदा हो गया। ऐसा उपहार कौन है जो आज तक कोई दे न

कमला शुक्ला

पाया और यह देने जा रहा है! इसी कुतूहल को लेकर अगले शुक्रवार को गंगाबाई के घर दुगुनी संख्या में भक्त आ पहुँचे।

बड़ी देर हो रही थी, पर नया भक्त पहुँचा न था। भक्तों में प्रसाद बांटने का समय बीतता जा रहा था। गंगाबाई में काली माता प्रवेश करके नये भक्त को शाप दे रही थी। उसी वक़्त शिकारी आ पहुँचा। उसके हाथों में कोई उपहार न था।

"अरे भक्त! मेरा उपहार कहाँ? मूर्ख, क्या तू मेरे साथ मज़ाक करता है?" गंगाबाई गरज उठी।

"माईजी, मेरा उपहार बाहर है। खुद देखिये तो सही!" शिकार ने जवाब दिया। इस पर गंगाबाई के साथ सभी भक्त बाहर आये, बाहर एक पिंजड़ा था, जिसमें एक बड़ा शेर दिखाई दिया।

"माईजी! यही आप का वाहन है। इस भक्त के द्वारा समर्पित इस छोटे से उपहार को स्वीकार कर इस पर सवार कीजिए!" इन शब्दों के साथ शिकारी पिंजड़ा खोलने को हुआ। उस दृश्य को देख सारे भक्त कांप उठे। गंगाबाई चीखकर कांपते हुए बोली—"नहीं, नहीं, पिंजड़े का दर्वाजा मत खोलो।"

"माताजी, आप घबराते क्यों हैं? आप अपने वाहन पर सवार होकर हम भक्तों की आँखों को पावन बना लीजिए!" यों कहते शिकारी पुनः द्वार खोलने को हुआ।
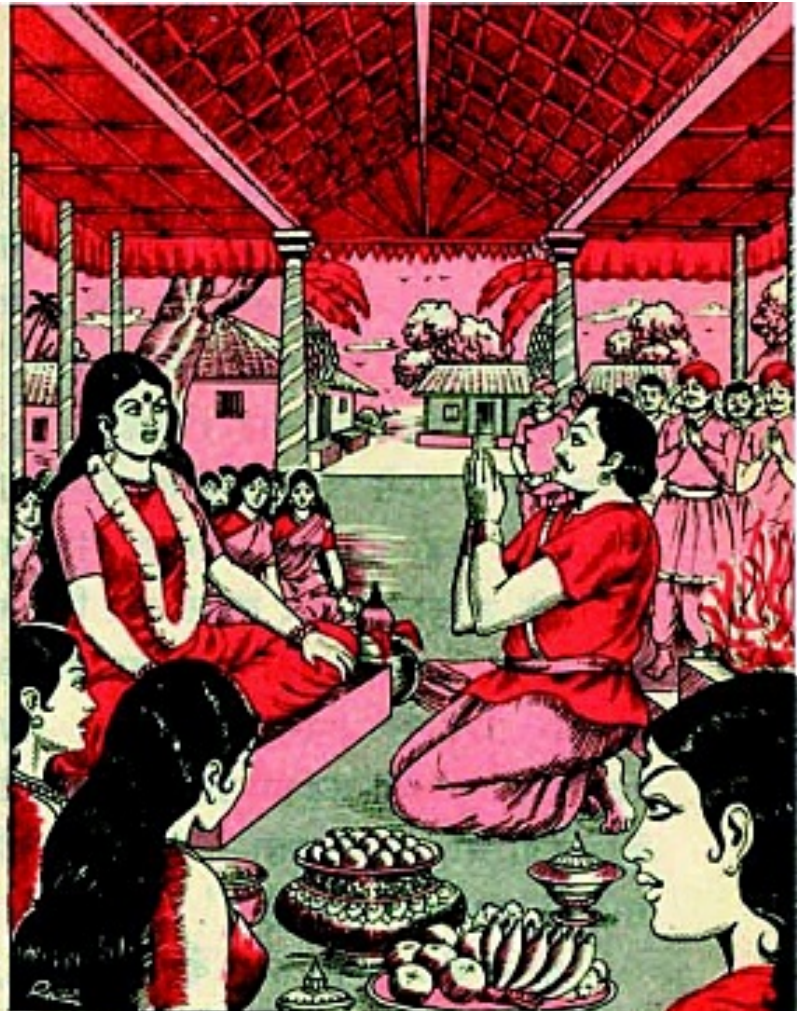
इसे देख गंगाबाई घर के अन्दर भाग गई। शिकारी ने रास्ता रोककर कहा—"माई, अब आप यह नाटक बंद कर दीजिए! यदि आप सचमुच काली माता हैं तो अपने वाहन इस शेर पर सवार हो जाइए। वरना मान लीजिए कि आज तक आप ने लोगों के साथ धोखा दिया है। ऐसी हालत में यह शेर आप को निगल डाले, तब भी कोई पाप न होगा।"

गंगाबाई कोई जवाब न दे पाई, घबराई आँखों से चारों तरफ़ देखने लगी। भक्तों को असली बात का पता लगा। गंगाबाई

का पति लोगों को समझा-बुझाने की कोशिश करने लगा तो सबने उसे पीटा।

"मुझे शेर के मुँह का आहार मत बना दो। यह बात सच है कि मैंने आज तक सभी लोगों को धोखा दिया है।" इन शब्दों के साथ गंगाबाई रो पड़ी।

भक्तों ने गुस्से में आकर गंगाबाई को बुरा-भला कह सुनाया। उसके पति ने भक्तों के उपहार लाकर वापस कर दिये। इसके बाद शिकारी वहाँ से चला गया।

जब शिकारी अपने घर पहुँचा तब पंद्रह साल का वह लड़का उसके इंतजार में बैठा हुआ था, उसने पूछा-"बताओ भाई साहब! क्या क्या हुआ है?"

"तुमने जैसा कहा, ठीक वैसा ही हुआ, मगर इस दुनिया में कई लोग अपने पेट भरने के लिए नाना प्रकार के धोखे-दगे करते रहते हैं। तुमने जान-बूझकर उस औरत के धंधे को क्यों बिगाड़ना चाहा? आखिर इसका कोई कारण भी तो हो?" शिकारी ने लड़के से पूछा।

"मैं उसके साथ ईर्ष्या नहीं करता, वह और कोई नहीं, मेरी माँ हैं। मेरी माँ को मेरे पिताजी ने ही इस धोखा-धड़ी का शिकार बनाया है। मेरे पिताजी अव्वल दर्जे के सुस्त हैं। अपनी नौकरी से छुट्टी पाने के लिए मेरी माँ को कमाई का एक साधन बनाया है। मैं धीरे धीरे दुनियादारी बातें जानने लगा हूँ। मेरे माँ-बाप यह जो नाटक रच रहे हैं, वह कभी न कभी प्रकट होकर ही रहेगा। तब मैं समाज को अपना चेहरा कैसे दिखा सकता हूँ? तुम्हारी कृपा से यह काम तुरंत सफल हो गया। जब तक मैं अपने पैरों पर आप खड़े हो जाऊंगा, तब तक इस घटना को सभी लोग भूल जायेंगे। तुम्हारी इस मेहनत के बदले में ये रुपये रख लो।" इन शब्दों के साथ वह लड़का शिकारी को रुपये देने को हुआ।

"तुमने मेरे द्वारा एक बहुत ही बढ़िया कार्य कराया है! बदले में मुझे पुरस्कार नहीं लेना है।" यों समझाकर शिकारी ने लड़के को घर भेज दिया।

दूल्हा

कृष्णगिरि नामक गाँव में ईश्वरचन्द्र और राधाबाई नामक दंपति थे। उन्हें कोई संतान न थी। संतान के वास्ते उन्होंने कई व्रत और उपवास किये, पर कोई फ़ायदा न रहा। लेकिन एक दिन उनके घर एक साधू आ पहुँचा। साधू ने राधाबाई को थोड़ा-सा भभूत देकर समझाया–"बेटी, तुम इस भभूत को पानी में मिलाकर पी जाओ। तुम्हें एक पुत्र पैदा होगा। वह विवाह होने तक मंदबुद्धि रहेगा। विवाह के हो जाने पर वह बुद्धिमान बन जाएगा, पर तुम्हें उस बालक का नामकरण "दूल्हा" करना होगा।"

साधू के कहे अनुसार राधाबाई ने भभूत को पानी में मिलाकर पी लिया, एक साल के अन्दर राधाबाई के एक पुत्र पैदा हुआ। उसका नामकरण "दूल्हा" किया गया। पुत्र के नाम के अनुरूप रखने के ख्याल से माता-पिता ने उस बालक को हमेशा दूल्हे के वेष में रखा!

पांच साल के पूरा होते ही उस बालक की पढ़ाई का प्रबंध किया गया। उसके युक्त वयस्क के होने तक वह पढ़ता जरूर था, पर उसके दिमाग में कोई बात बैठती न थी। इसके बाद उसने पढ़ाई बंद की, रेशमी धोती पहने, भाल पर तिलक लगाये दूल्हे के वेष में गलियों में घूमने लगा। वह बालक वैसे देखने में सुंदर था, साथ ही उसका नाम दूल्हा था, फिर भी उसके दिमाग में गोबर भरा हुआ था, इस कारण कोई भी गृहस्थ उसे अपनी लड़की देने को बिलकुल तैयार न था।

एक बार ईश्वरचन्द्र को अपनी पत्नी और पुत्र के साथ दूर की यात्रा करनी पड़ी। मार्ग मध्य में एक गाँव की सीमा

जगन्नाथ पारीक

पर उनकी गाड़ी रुक गई। रास्ते को रोके कई लोग आपस में किसी बात को लेकर झगड़ रहे थे। बात यह थी कि निकट के एक घर में शादी होनेवाली थी। दहेज़ के लेन-देन में मनमुटाव पैदा होने के कारण दोनों पक्षों के लोग परस्पर झगड़ रहे थे।

दूल्हे ने सोचा कि यह झगड़ा अभी खतम होनेवाला नहीं है, वह गाड़ी से उतर पड़ा, चारों ओर देखते आगे बढ़ा। उसे शादी के पंदाल में गाने-बजाने की आवाज़ सुनाई दी। शादी के रस्म देखने के ख्याल से वह उस पंदाल में घुस पड़ा। पुरोहित ने उसे देख शंका भरे स्वर में पूछा–"बेटा, तुम कौन हो?"

उस युवक ने सोचा कि उसका नाम पूछा जा रहा है, उसने झट से जवाब दिया–"मैं तो दूल्हा हूँ।"

पुरोहित ने सोचा कि शायद दोनों पक्ष के लोगों के बीच झगड़ा शांत हो गया है और वरपक्षवालों ने दूल्हे को भेज दिया है, यों सोचकर उसने उसी क्षण उस युवक का स्वागत किया, विवाह की वेदिका पर बिठाकर शादी के रस्म पूरा करने लगा।

बाहर झगड़ा चल ही रहा था। दुलहिन के पिता ने सोचा कि अब इस शादी के होने की संभावना नहीं है, इसलिए वह उस शादी को रोकने के ख्याल से पंदाल में लौट आया, तब तक शादी के आधे से अधिक रस्म पूरे हो चुके थे। दूल्हा भी देखने में ठीक-ठाक था। वह यों सोचकर विवाह के समाप्त होने तक चुप रहा कि बाक़ी विवरण बाद को जान लिये जाय!

इस प्रकार दूल्हे की शादी संपन्न हो गई। उसके माता-पिता अप्रयत्न ही संपन्न हुए इस विवाह पर बहुत ही खुश हुए। साधू के कहे मुताबिक़ विवाह के होते ही दूल्हे को उसकी सारी शिक्षा याद हो आई और वह लोगों के बीच बड़ा ही अक़्लमंद के नाम से मशहूर हुआ।

दाँव

कांचीपुर के राजा चन्द्रवर्मा के दरबार में एक दिन एक ज्योतिषी आया और उसने कहा–"राजन, आप का राज्य एक महीने के लिए दूसरों के अधीन में जानेवाला है।"

ज्योतिष शास्त्र में विश्वास रखनेवाला राजा ये बातें सुन कांप उठा। इसे भांपकर मन्त्री ने ज्योतिषी से कहा–"ऐसा न हुआ तो आपका सिरच्छेद कराया जाएगा।"

"यदि ऐसा हुआ तो मुझे एक लाख स्वर्ण मुद्राएँ दिलाने का दाँव लगाइए।" ज्योतिषी ने अपनी शर्त रखी।

मंत्री ने मान लिया। उसी दिन मंत्री ने राजा चन्द्रवर्मा को काशी-यात्रा पर भेजा और वह स्वयं राज्य का भार संभालने लगा।

एक महीना बीत गया। राजा ने लौटकर पुनः राज्य का भार संभाला।

ज्योतिषी ने प्रवेश करके मंत्री से पूछा–"मुझे एक लाख स्वर्ण मुद्राएँ दिलवा दीजिए।"

मंत्री ने पल भर सोचकर ज्योतिषी को एक लाख स्वर्ण मुद्राएँ दिलवा दीं।

आशाओं का अंत

चीन के एक पहाड़ी प्रदेश में एक देवी का प्राचीन मंदिर था। लोगों का यह विश्वास था कि यदि कोई उस मंदिर में एक रात सो जाता है तो वह देवी उसकी सारी कामनाओं की पूर्ति करेगी।

उस मंदिर से थोड़ी दूर पर एक गाँव में चिन-नु नामक एक व्यक्ति था। वह बड़ा ही आलसी था। यदि वह एक दिन काम पर जाता तो दो-चार दिन आराम करता। बिना मेहनत किये सुख भोगने की उसकी प्रबल इच्छा थी। उसे किसी ने उस देवी की महिमा बताई।

चिन-नु उस पहाड़ पर चला गया। संध्या तक वह मंदिर में पहुँचा। देवी को प्रणाम करके रात को उसी मंदिर में सो गया। रात को उसने एक सपना देखा।

सपने में देवी ने दर्शन देकर कहा—"मैं तुम्हारी कामना को जानती हूँ। मैं तुम्हें रोज़ दस सिक्के दिला सकती हूँ। पर क्या उन सिक्कों से तुम सुखी बन सकते हो?"

"माताजी! यदि तुम इतना प्रबंध करोगी तो इस दुनिया में मुझ से बढ़कर कौन सुखी होगा?" चिन-नु ने बताया।

"तथास्तु!" कह देवी अदृश्य हो गई।

चिन-नु झट उठकर बैठ गया। उसकी बगल में चमड़े की एक थैली पड़ी हुई थी। उसमें चिन-नु ने टटोलकर देखा। दस सिक्के उसके हाथ लगे।

देवी की महिमा इस प्रकार साबित हो गई। चिन-नु दस सिक्के अपनी जेब में डालकर फिर उसने थैली में हाथ रखा, पर इस बार उसके हाथ कुछ न लगा। इसका मतलब था कि वह थैली प्रति दिन उसे सिर्फ़ दस सिक्के देगी।

चिन-नु थैली लेकर अपने गाँव को लौट आया। उसे रोज़ जो दस सिक्के मिल

गौरीशंकर मिश्र

जाते थे, उनसे वह खाने की चीजें खरीदकर अपना पेट भर लेता था ।

थैली के मिलने के बाद चिन-नु ने काम-वाम करना बंद किया । यूँ ही बैठे-बैठे पेट भरते जाने पर उसे बदहजमी हो गई, तब उसे ऐसा मालूम हुआ कि जिंदगी का मतलब केवल पेट भरना नहीं है ।

गांव का चक्कर लगाते उसने एक सुंदर युवती को देखा । वह एक अमीर घराने की इकलौती कन्या थी । चिन-नु ने उस युवती के साथ विवाह करना चाहा । धनी ने उसे साफ़ बताया कि अगर वह एक हजार सिक्के कन्या शुल्क के रूप में दे, तभी वह उस कन्या के साथ शादी कर सकता है । मगर वह एक हजार सिक्के कहाँ से लाता?

चिन-नु के मन में एक उपाय सूझा । वह अपनी थैली को उस गाँव के एक धनी के यहाँ ले गया । उसे थैली की महिमा बताकर साबित किया, उसे गिरवी रखकर एक हजार सिक्के ले आया और उस धन से उसने उस अमीर कन्या के साथ विवाह कर लिया ।

यहीं से उसकी तक़लीफ़ों की शुरूआत हुई । अपनी पत्नी का पालन करके और थैली को गिरवी से छुड़ाने के वास्ते वह जी तोड़ मेहनत करने लगा । उसके ससुर के पास काफ़ी धन था, फिर भी

उसने कर्ज तक देने से साफ़ इनकार किया । एक ओर चिन-नु की पत्नी उसे इस बात के लिए तंग करने लगी कि वह कोई व्यापार शुरू करके समाज में प्रतिष्ठापूर्वक जिंदगी बितावे । इससे तंग आकर चिन-नु ने धनी के यहाँ से और थोड़े सिक्के उधार ले आया । उसने छोटा-मोटा व्यापार शुरू भी किया, लेकिन व्यापार का अनुभव न होने के कारण जल्द ही उसका दीवाला निकल गया । इस बीच धनी के कर्ज को चुकाने की अवधि निकट आ गई । यदि वह कर्ज नहीं चुकायेगा तो उसे उस थैली से हाथ धोना पड़ेगा । कर्ज चुकाने के लिए उसके पास एक कौड़ी तक न था ।

मियाद के एक दिन पूर्व उसने अपनी पत्नी से धन माँगा। उसके मन में पहले से ही यह धारणा बैठ गई थी कि उसका पति निकम्मा और नालायक़ है।

उसने गरजकर कहा—"कमबख्त थैली के वास्ते तुम क्यों परेशान हो जाते हो? अलावा इसके तुमने उस थैली पर भरोसा करके मेरे साथ क्यों विवाह किया?"

इस पर चिन-नु का क्रोध उमड़ पड़ा। उसने अपनी पत्नी को पीटा, वह रूठकर अपने मायके चली गई।

चिन-नु को अपनी पत्नी के मायके चले जाने की अपेक्षा अपनी थैली के हाथ से निकल जाने की बड़ी चिंता थी। उस रात को उसे नींद तक न आई। आधी रात के बीत जाने पर उसने धनी के घर चोरी करना चाहा और उसके घर में घुसकर थैली हड़प लाया।

थैली के मिल जाने के बाद वह अपनी पत्नी की चिंता में घुलने लगा। उसने अपने ससुर के घर जाकर अपनी पत्नी को घर चलने को कहा, पर उसने चिन-नु का अपमान करके वापस कर दिया।

इस अपमान के कारण चिन-नु का दिमाग बिलकुल खराब हो गया। उसने शराबखाने में जाकर चखकर पिया। आखिर अपनी थैली में से दस सिक्के निकालकर दुकानदार के हाथ रखा। दुकानदार ने सोचा कि उस थैली में और भी सिक्के हैं, इस ख्याल से वह थैली को खींचने को हुआ।

इस पर चिन-नु ने क्रोध में आकर पास में पड़ी हुई लाठी लेकर दूकानदार को पीटा। लोगों की भीड़ लग गई। उसी वक़्त धनी ने सिपाहियों के साथ वहाँ पर प्रवेश करके चिन-नु को बन्दी बनाया।

अब चिन-नु के मन में उस थैली के प्रति घृणा उत्पन्न हुई। उसे लगा कि उसकी इन सारी तकलीफ़ों की जड़ वह थैली है, उसने सबके देखते उस थैली को पास के अलाव में फेंक दिया और सिपाहियों के साथ चुपचाप चला गया।

अतृप्त कामनाएँ

श्रृंगेरी नामक शहर में राजगोपाल नामक एक राजकर्मचारी था। वह जो कुछ कमाता, वह अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए पर्याप्त था।

राजगोपाल के पड़ोसी महलों में बड़े बड़े धनवान रहा करते थे। उन घरों की महिलाएँ हमेशा रेशमी साड़ियाँ पहनतीं और हीरे तथा जवारतों के आभूषण धारण किया करती थीं। उनका वैभव देख राजगोपाल की पत्नी सदा यही सोचती कि वह भी उन धनी महिलाओं की भांति बड़े महलों में निवास करते, हीरे व जवाहरातों के आभूषण पहने, रेशमी साड़ियाँ कब धारण कर सकती है? मगर राजगोपाल की आमदनी उसकी इच्छाओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त न थी। इसलिए राजगोपाल अपनी पत्नी को समझाता कि ऐसी कामनाएँ तुम्हें नहीं करनी चाहिए। पर सीतालक्ष्मी उल्टे सवाल कर देती— "राजदरबार में नौकरी करते कितने ही लोगों ने दोनों हाथों से क्या नहीं कमाया? मेरी यह बदक़िस्मती थी कि तुम जैसे नालायक़ के साथ मैंने शादी कर ली। इसका फल मुझे जिंदगी भर भोगना होगा।"

अपनी पत्नी के हठ से तंग आकर राजगोपाल ने अनुचित ढंग से धन कमाना प्रारंभ किया और दो साल के भीतर उसने एक लाख रुपये जमा किये। उस धन उसने दो महल, तीन एकड़ जमीन, रेशमी साड़ियाँ तथा हीरे व जवाहरातों के आभूषण खरीदना चाहा, मगर उसके सामने यह समस्या पैदा हो गई कि अगर राजा को यह मालूम हो जाय कि वह एक बड़ा धनी बन गया है और यह पूछे कि उसे यह सारा धन कैसे प्राप्त हुआ है तो क्या जवाब दे?

प्रमीला ठाकुर

सीतालक्ष्मी ने राजगोपाल को एक उपाय बताया—"तुम ऐसा नाटक रचो कि तुमने अपने मित्र सेठ गोविंददास के यहाँ से उधार ले लिया है।"

राजगोपाल ने सेठ गोविंददास के घर जाकर सारी बातें कह सुनाईं और कहा—"सेठ साहब, मैं तुम्हें एक जाली उधार पत्र लिखकर देता हूँ। अगर राजा पूछताछ करें तो तुम झूठ-मूठ बतला देना कि तुमने मुझे कर्ज दिया है, थोड़े दिन बाद उस पत्र को फाड़कर फेंक देंगे।"

सेठ साहब ने राजगोपाल की बात मान ली। इसके बाद राजगोपाल ने अनुचित ढंग से धन कमाया, दो महल, तीन एकड़ खेत, अपनी पत्नी के लिए रेशमी साड़ियाँ तथा हीरों के गहने भी खरीद लिये। एक महल में वह ख़ुद रहने लगा और दूसरा महल उसने भाड़े पर दे दिया।

थोड़े दिन बाद सीतालक्ष्मी ने अपनी पति को सलाह दी—"हमें खेत से अनाज मिलता है, ऊपरी खर्च के लिए भाड़े के रुपये मिल जाते हैं। अब तुम नौकरी छोड़ दो।" राजगोपाल ने वैसा ही किया।

एक दिन अचानक सेठ गोविंददास की मृत्यु हो गई। उसकी संपत्ति के कोई वारिस न था, इसलिए राजकर्मचारियों ने आकर सेठ साहब की सारी संपत्ति पर अधिकार कर लिया। उनकी तिजोरी में अन्य अनेक ऋण-पत्रों के साथ राजगोपाल का ऋण-पत्र भी था।

इस कारण राजगोपाल को अपने नकली ऋण को चुकाना पड़ा। उसके यहाँ नक़द न थी, इस वज़ह से राजकर्मचारियों ने उसकी जमीन-जायदाद नीलाम करके सारा धन ले लिया। उसकी नौकरी भी छूट गई थी। अब उसके सामने सिवाय भीख माँगने के कोई चारा न था। तब लाचार होकर राजगोपाल अपनी पत्नी को साथ ले दूसरे देश में चला गया और वहाँ पर भीख माँगते दुखमय जीवन बिताने लगा।

संदीप का व्यापारी

संदीपनगर में हीरादत्त नामक एक धनी समुद्री व्यापारी था। बाहर के टापुओं में उसके माल की अच्छी माँग थी और उसे अपार लाभ होता था। परंतु वह अंध विश्वासी था और खासकर शकुनों पर अत्यधिक विश्वास करता था।

संदीप में और कई व्यापारी थे, पर वे हीरादत्त की तुलना में छोटे थे। इसलिए ईर्ष्यावश उन लोगों ने हीरादत्त के साथ दगा करना चाहा। ऐसे लोगों में हीरादत्त का निकट रिश्तेदार सोमदत्त प्रधान था। हीरादत्त को शकुनों पर जो विश्वास था, उसे आधार बनाकर सोमदत्त ने उसका सर्वनाश करने का संकल्प किया।

एक बार हीरादत्त ने सुवर्ण द्वीप की यात्रा की योजना बनाई। इसके वास्ते अपनी आधी संपत्ति लगाकर तरह-तरह का माल खरीदा, तब जहाज़ पर लदवाया। यही एक अच्छा मौक़ा मानकर सोमदत्त ने अपने अनुचरों को नाविकों के रूप में उस नौका में भेजा। उस षड़यंत्र के बारे में हीरादत्त बिलकुल न जानता था। नावों ने लंगर उठाये और थोड़ी दूर की यात्रा हुई थी कि सोमदत्त के अनुचरों ने जहाज़ों में छेद बनाये और छोटी-छोटी डोंगियों में समुद्री तट को वापस चले गये। इसके थोड़ी देर बाद जहाज़ माल सहित समुद्र में डूब गये। हीरादत्त और उसके अनुचर छोटी-छोटी डोंगियों के द्वारा लौट आये।

हीरादत्त ने सोचा कि किसी दुर्घटना के द्वारा इस बार जहाज़ डूब गया है, यों सोचकर उसने दूसरी बार यात्रा की तैयारियाँ कीं। इस बार उसने थोड़े ही जहाज़ों में माल लदवाया। इस बार भी सोमदत्त ने जहाज़ों को डुबवा दिया।

इस घटना से हीरादत्त मानसिक एवं आर्थिक दृष्टि से भी शिथिल हो गया। उसके मन में यह विश्वास जम गया कि यह उसके पतन का एक ज़बर्दस्त दुश्शकुन है और इस जन्म में उसे समुद्री व्यापार करने की क़िस्मत न रही। वह यह कहा करता—"मेरे जहाज पाल खोल दे तो वे जरूर डूब जायेंगे।" धीरे-धीरे वह मानसिक व्याधि का शिकार हो गया।

कई मित्रों ने हीरादत्त की निराशा को दूर करना चाहा, लेकिन वह यही जवाब देता—"मेरे दिन अच्छे नहीं हैं। मेरे जहाज़ पानी पर नहीं तिरते! मेरे भीतर दुष्ट ग्रहों ने प्रवेश कर लिया है।"

हीरादत्त के दुश्मनों ने उसकी निराशा को और बढ़ा दिया। संदीप राजा प्रताप हीरादत्त को बहुत चाहता था। हीरादत्त की बुरी हालत का परिचय राजा को शीघ्र ही मिल गया, पर हीरादत्त ने कोई उत्साह नहीं दिखाया। उसने राजा से निराश भरे शब्दों में कहा—"महाराज! ये सारे प्रयत्न मैं फिर से क्यों करूँ? मेरे जहाज़ों का डूबना निश्चित है।"

राजा ने एक बार भरे दरबार में पूछा—"हमारे व्यापारी के मन को बदलने का उपाय क्या है?" पर किसी ने कोई जवाब नहीं दिया। मगर दरबारी जादूगर सोमनाथ ने उठकर कहा—"महाराज, मुझे थोड़े दिनों का समय दिया जाय तो मैं अपने जादू के द्वारा हीरादत्त के मन को बदलने का प्रयत्न करूँगा।"

उधर सोमदत्त ने हीरादत्त के मन को तोड़ने के जो षड़यंत्र किये, उनमें एक यह भी था कि सोमदत्त ने एक ज्योतिषी को बुलवाकर उसका हाथ दिखलवाया और उसके द्वारा कहलाया कि अब उसके दिन फिरने के नहीं हैं।

यह बात जादूगर सोमनाथ जानता था। इसलिए वह हीरादत्त को दरबारी ज्योतिषी के पास ले गया और उसका हाथ तथा जन्मकुंडली दिखाई। ज्योतिषी

ने दोनों की जांच करके बताया कि उसका भविष्य उज्वल है।

फिर भी हीरादत्त समुद्री व्यापार करने को तैयार न हुआ, उसने सोमनाथ से कहा–"समुद्र पर का व्यापार अब मेरी क़िस्मत में नहीं लिखा हुआ है। एक बार नहीं बल्कि दो बार क्रमशः मेरे जहाज़ डूब गये हैं।"

"आप जानते हैं कि मैं इंद्रजाल का ज्ञान रखता हूँ। इस बार मैं आप के साथ चलता हूँ। मैं देखूंगा कि आप के जहाज़ न डूबे। अलावा इसके राजा जहाज़ों की रक्षा के लिए सिपाहियों को भेजनेवाले हैं।" सोमनाथ ने समझाया।

"यदि मेरे भाग्य में लिखा हो कि मेरे जहाज़ डूबने हैं तो इंद्रजाल उसको रोक सकता है?" हीरादत्त ने पूछा।

"मेरा इंद्रजाल प्रारब्ध पर भी विजय प्राप्त कर सकता है। आज दुपहर के बाद आप मेरे घर आवे तो यह बात मैं प्रत्यक्ष दिखाऊंगा।" सोमनाथ बोला।

इसी निर्णय के अनुसार हीरादत्त सोमनाथ के घर पहुँचा। सोमनाथ एक गिलास भरकर पानी लाया और हीरादत्त के सामने मेज पर रखा। उसने हीरादत्त के हाथ एक सुई देकर उसे पानी में डालने को कहा। सुई पानी में डूब गई और

गिलास के अंदर चली गई। सोमनाथ ने उसे बाहर निकाला, हीरादत्त के हाथ देकर कहा–"आप कोई ऐसा उपाय कीजिए जिससे सुई पानी पर तिर सके।" हीरादत्त ने कई प्रकार से कोशिश की, पर सुई हर बार पानी में डूबती गई।

इसके बाद सोमनाथ ने अपने पुत्र को पुकारकर हीरादत्त को नाश्ता खिलाने का आदेश दिया और उसके साथ हीरादत्त को भोजनालय में भेज दिया। हीरादत्त के चले जाने के बाद सोमनाथ ने सुई को कपड़े से साफ़ किया ताकि उस पर नमी न हो, तब एक पतली तारवाली अंकुड़ी पर सुई को रखा, तब उन दोनों को

धीरे से पानी पर छोड़ दिया। तारवाली अंकुड़ी पानी में तो डूब गई, पर सुई पानी पर तिर गई। सोमनाथ ने सुई को पानी पर रहने दिया और डूबी हुई अंकुड़ी को युक्ति के साथ बाहर निकालकर छिपा रखा।

नाश्ता समाप्त करके हीरादत्त लौट आया। पानी पर तिरनेवाली सुई को देख वह चकित रह गया।

"यह तो अद्भुत है।" उसके मुंह से निकल पड़ा।

"जी हाँ, मैं अद्भुत कार्य करनेवाला व्यक्ति हूँ। मेरे जहाज़ पर रहते, वह कभी डूब नहीं सकता।" सोमनाथ ने जवाब दिया।

सोमनाथ के इंद्रजाल के द्वारा हीरादत्त को थोड़ा मनोबल प्राप्त हुआ। उसने एक और समुद्री यात्रा की तैयारियां कीं। इस बात की सावधानी रखी गई कि किसी को यह पता तक न चले कि इस यात्रा के प्रयत्न में सोमनाथ तथा राजा का भी हाथ है। नाविकों के चुनाव के समय सोमदत्त के अनुचर फिर से घुस आये, मगर जहाज़ों पर वेष बदलकर सोमनाथ तथा राजा के गुप्तचर भी थे। आधी रात के वक़्त उन दुष्टों ने जहाज़ों में छेद करने का जब प्रयत्न किया तब राजा के गुप्तचरों ने उन्हें बन्दी बनाया। इसके बाद जहाज़ों को फिर से संदीप की ओर लौटाया गया।

उन दुष्टों को राजदरबार में हाज़िर किया गया। उन लोगों ने उन व्यापारियों के नाम प्रकट किये, जिन्होंने उन्हें इस काम के लिए नियुक्त किया था। इस प्रकार सोमदत्त का षड़यंत्र प्रकट हो गया; उसे तथा उसके अनुचरों को दण्ड दिया गया।

इसके बाद हीरादत्त के मन में फिर से साहस उत्पन्न हुआ। उसने पुन: पहले की भांति अपने माल को विदेशों के लिए निर्यात किया और इस तरह अपने व्यापार को चालू रखा।

नक़ली सोना

एक गाँव में सिद्धेश्वर नामक एक किसान था। उसके यहाँ जो थोड़ी-बहुत जमीन थी, उसमें कड़ी मेहनत करके जो फ़सल पैदा करता, उससे अपने परिवार को जैसे तैसे चला लेता था। एक साल उसकी फ़सल बरबाद हो गई। इस पर सिद्धेश्वर ने माधवाचार्य नामक एक सुनार के यहाँ क़र्ज लिया। माधवाचार्य एक कुशल कारीगर था, साथ ही वह सूद का व्यापार भी किया करता था।

थोड़े दिन बाद सिद्धेश्वर ने अपना ऋण चुकाया और अपनी पत्नी के लिए माधवाचार्य से कोई गहना बनवा लिया। माधवाचार्य ने उस सोने में आधा तांबा मिलाकर गहना तो बहुत बढ़िया बनाकर दे दिया।

उन्हीं दिनों में संक्रांति पर्व आ पड़ा। माधवाचार्य की पुत्री अपने ससुराल से मायके आ पहुँची। एक दिन वह सिद्धेश्वर के घर पहुँची। सिद्धेश्वर की पत्नी ने माधवाचार्य की पुत्री को अपना नया आभूषण दिखा दिया।

माधवाचार्य की पुत्री उस आभूषण की कारीगरी पर मुग्ध हो उठी। उसने अपने पिता के पास जाकर कहा–"आप ने सिद्धेश्वर की पत्नी के लिए बहुत ही बढ़िया आभूषण बनाकर दिया है। इसलिए आप मेरा चन्द्रहार तोड़कर ऐसा ही आभूषण बनाकर दीजिए। आप बनाकर न देंगे तो मैं सिद्धेश्वर की पत्नी का आभूषण लेते जाऊँगी, आप उन्हें फिर वैसा ही आभूषण बनाकर दे दीजिए।"

माधवाचार्य के चेहरे पर काटो तो खून नहीं, उसने चुपचाप अपनी बेटी के लिए ऐसा ही गहना बनाकर दे दिया। माधवाचार्य की बेटी उसी रात को

रतनलाल सिंघी

अपना नया आभूषण लेकर सिद्धेश्वर के घर पहुँची। सिद्धेश्वर की पत्नी ने उस आभूषण की बड़ी तारीफ़ की, लेकिन माधवाचार्य की पुत्री को लगा कि सिद्धेश्वर की पत्नी का आभूषण उसके आभूषण की अपेक्षा बढ़िया है।

इस पर माधवाचार्य की पुत्री ने सिद्धेश्वर की पत्नी से पूछा—"हम दोनों अपने अपने आभूषण बदल लेंगी। अगर आप का आभूषण मेरे आभूषण से ज्यादा वज़नदार हो तो उसके अंतर का मूल्य में दे दूंगी, यदि मेरा आभूषण ज्यादा वज़नदार हो तो आप मुझे कुछ न दे।"

सिद्धेश्वर की पत्नी इनकार न कर सकी, इस पर दोनों माधवाचार्य के घर गईं। माधवाचार्य घर पर न था, इसलिए उसकी पत्नी ने दोनों आभूषण लेलकर दिखाया। माधवाचार्य की पुत्री का आभूषण थोड़ा ज्यादा वज़नदार था, इसलिए दोनों ने उसी वक़्त अपने अपने आभूषण बदले डाले।

दूसरे दिन माधवाचार्य की पुत्री अपने ससुराल गई। उसके पति ने उस आभूषण को कसौटी पर कसकर देखा तो उसे पता चला कि वह तांबे का आभूषण है। उसने अपने ससुर को खरीखोटी सुनाई।

माधवाचार्य की समझ में न आया सिद्धेश्वर की पत्नी के लिए बनाकर दिया हुआ आभूषण उसकी पुत्री के हाथ कैसे लगा है? उसने अपनी पत्नी से पूछा—"कहीं हमारी बेटी यह आभूषण लेकर सिद्धेश्वर के घर तो नहीं गई थी?"

माधवाचार्य की पत्नी ने यह सोचकर कि रहस्य के प्रकट होने पर उसे पीटेगा, उसने झूठ कहा कि बेटी कहीं नहीं गई!

इसके बाद माधवाचार्य ने अपने दामाद से क्षमा मांगी, और कहा कि उसके लिए वह दूसरा गहना बनाकर देगा।

पर माधवाचार्य के दामाद ने कहा—"ससुरजी! मैं ही खुद बनाकर दूंगा।" यों कहकर वह माधवाचार्य से खरा सोना लेकर अपने घर चला गया।

रावण का लंका याग करने का समाचार विभीषण को मिला। उसने राम और वानर वीरों से यों कहा—"यदि रावण के द्वारा किया जानेवाला होम निर्विघ्न संपन्न हुआ तो उसमें से इस्फात शरीरवाले योद्धा और चतुरंगी सेना का आविर्भाव होगा। उस समय रावण को जीतना असंभव होगा। इसलिए रावण के याग का भंग करना चाहिए।"

मगर उनके सामने यह समस्या उत्पन्न हुई कि यज्ञ-भंग कैसे किया जाय?

इस पर जांबवान ने उपाय बताया—"अंगद अदृश्य करणी नामक विद्या जानता है। उसकी मदद से वह रावण के यज्ञ में बाधा डाल सकता है।"

इसके बाद अदृश्य करणी विद्या के प्रभाव से अंगद अदृश्य रूप में ही रावण के अंतःपुर में पहुँचा, मंदोदरी के केश पकड़कर रावण के पास खींच ले आया। इसे देखकर भी रावण यज्ञ-दीक्षा से विमुख न हुआ। इस पर मंदोदरी आर्तनाद करने लगी—"तीनों लोकों को जीतने वाले की पत्नी की रक्षा करने वाला क्या कोई नहीं है?" ये शब्द सुनकर रावण यज्ञ को छोड़ उठ खड़ा हुआ। इस प्रकार उसका यज्ञ-भंग हुआ। तब अंगद चुपके से खिसक गया।

उस वक़्त मंदोदरी ने रावण को सलाह दी—"अब भी सही कुछ बिगड़ा नहीं, तुम रामचन्द्रजी के साथ संधि कर लो।"

३०. राम और लक्ष्मण का अपहरण

ही उन्होंने जो यह प्रतिज्ञा भी की थी कि वे मेरा वध करके सीताजी को अपने साथ ले जायेंगे। इस प्रकार उनकी दूसरी प्रतिज्ञा भी भंग होगी। रामचन्द्रजी एक चोर की भांति आकर कभी अपनी पत्नी को नहीं ले जा सकते! मेरे अनंतर तुम सब जब सहगमन करोगी तब सीताजी को भी उस चिता में ढकेल दो। ऐसी हालत में रामचन्द्रजी सीताजी के वियोग में स्वयं अपने प्राण त्याग देंगे।"

ये शब्द कहकर रावण पश्चिमी दिशा की ओर चल पड़ा। लंका की यह हालत थी, उधर लंका से हज़ारों योजन नीचे स्थित पात्ताल लंका की हालत कुछ और थी।

पाताल लंका का शासक मैरावण था। वह अद्‌भुत मंत्र शक्तियां रखता था, माया-विद्याओं से भलीभांति परिचित था। उसका बड़ा भाई अहिरावण था।

मैरावण नागलोक से वासुकी की पुत्री चन्द्रसेना को अपनी माया के बल पर अपहरण कर लाया और जबर्दस्ती उसके साथ विवाह करने के लिए सताने लगा। चन्द्रसेना अनुपम रूपवती थी। उसने अपने मन में रामचन्द्रजी को वरण कर लिया और मैरावण से स्पष्ट बताया कि रामचन्द्रजी ही मेरे पति हैं। सीताजी के स्वयंवर के समय चन्द्रसेना नागों के साथ

रावण ने दृढ़ स्वर में कहा—"क्या तुम यही सलाह देती हो? मैं अपने बंधु-मित्र, भाई और पुत्रों को खोकर इस वक़्त एक दुर्बल की भांति रामचन्द्रजी के साथ संधि कर लूं? तुम इसी विश्वास के साथ यह सलाह देती हो न कि रामचन्द्रजी मेरा वध कर बैठेंगे? राम को यह यश प्राप्त न हो, इसके वास्ते मैं प्रायोपवेश करूंगा, योग पद्धति के द्वारा कपाल को भेद कर प्राण त्याग दूंगा। रामचन्द्रजी ने यह प्रतिज्ञा की है कि वे मेरा वध करके विभीषण का राज्याभिषेक करेंगे। तब उनकी प्रतिज्ञा भंग होगी और विभीषण को भी राज्य की प्राप्ति न होगी। साथ

उस उत्सव में गई थी। वहाँ पर रामचन्द्र को देख तभी से उनकी मूर्ति की आराधना करती चली आ रही थी।

उधर लंका में रावण पश्चिमी तट पर पहुँचा। दाभ बिछाकर प्रायोपवेश करने के लिए तैयार हो गया।

उस समय नारद मुनि उस दिशा से निकले, रावण का यह हाल देख बोले– "रावण, यह तुम क्या कर रहे हो? तुम्हारा कोई हितैषी नहीं रहा? क्या तुम अपने मित्र मैरावण को भूल ही गये?"

ये शब्द सुनते ही रावण का उत्साह उमड़ पड़ा, वह उठ बैठा और आँखें मूँदकर उसने मैरावण का स्मरण किया। उस वक़्त मैरावण चन्द्रसेना के निकट पहुँचा। उसके द्वारा आराधना की जानेवाली रामचन्द्रजी की मूर्ति को खींच लिया और बोला–"मैं इस रामचन्द्र को लाकर काली माता की बलि दूंगा।"

"वे ही रामचन्द्र तुम्हारा वध कर बैठेंगे।" चन्द्रसेना ने सचेत किया।

"क्या तुम समझती हो कि मेरा वध करना कोई सरल कार्य है? इस पाताल लंका के एक हज़ार योजनों के नीचे एक भयंकर गुफा में एक रत्न-पेटिका में पाँच भ्रमरों के रूप में मेरे प्राण हैं। मैं तभी मर जाऊँगा जब कोई व्यक्ति उस पेटिका को खोलकर उन पाँचों भ्रमरों को एक ही साथ मार डालेगा। उस भयंकर गुफा की रक्षा अति भयंकर पिशाच कर रहे हैं। मेरे प्राण लेनेवाला इन तीनों लोकों में कोई नहीं है।" इन शब्दों के साथ मैरावण ने रामचन्द्र की मूर्ति को जमीन पर पटक दिया जिससे उसके कई टुकड़े हो गये।

उसी वक़्त उसे मालूम हुआ कि रावण उसका स्मरण कर रहा है। रावण ने आँखें खोलकर देखा, तभी पृथ्वी को फाड़कर उसके सामने खड़ा हुआ मैरावण उसे दिखाई पड़ा। दोनों ने परस्पर आलिंगन कर लिया। रावण ने मैरावण को सुझाया कि वह राम और लक्ष्मण का अंत कर दे।

"मैं जो करना चाहता था, वही बात तुमने भी कही। मैं कल राम और लक्ष्मण की बलि कालिमाता को दूंगा। तुम निश्चित रहो।" मैरावण ने सांत्वना दी। इस पर रावण अत्यंत प्रसन्न हुआ।

विभीषण को गुप्तचरों द्वारा यह बात मालूम हुई। उस वक़्त रात बीतती जा रही थी, इस कारण राम और लक्ष्मण सोने का उपक्रम कर रहे थे। विभीषण वानरों के पास गया, उन्हें मैरावण का समाचार सुनाकर बोला—"मैरावण राम और लक्ष्मण को उठाकर न ले जाय, इसकी रक्षा हम लोगों को करनी है।"

हनुमान ने तत्काल अपनी पूंछ का विस्तार किया और राम तथा लक्ष्मण के चारों तरफ़ एक क़िले की भांति लपेट दिया। इसके बाद वह उस पूंछ की कुंडली पर बैठ गया। बड़ी सावधानी के साथ पहरा देने लगा, ताकि एक चिउंटी भी पूंछवाले उस दुर्ग में प्रवेश न कर पाये।

थोड़ी देर बाद विभीषण पुनः वहाँ पर आ पहुँचा, हनुमान की सावधानी की प्रशंसा करते हुए बोला—"हनुमान, मुझे एक बार भीतर प्रवेश करके राम और लक्ष्मण के हाथों में रक्षा बंधन बांधने हैं।" इस पर हनुमान ने अपनी पूंछ को ढीला कर दिया जिससे विभीषण को भीतर प्रवेश करने का रास्ता मिला।

विभीषण अपना कार्य संपन्न करके बाहर आया, वापस लौटते हुए हनुमान को सावधान किया—"वीर हनुमान! वह मायावी मैरावण मेरे या अन्य हमारे साथियों के रूप में प्रवेश करके तुम्हें धोखा दे सकता है। तुम्हें सतर्क रहना है।"

उसके कथनानुसार थोड़ी देर में विभीषण पुनः लौट आया। हनुमान उसका गला दबाकर उस पर गदे का प्रहार करने को हुआ और ललकारा—"मैरावण, तुम्हारी चाल मेरे सामने चलने की नहीं है।"

"पगले हनुमान! क्या तुम धोखा खा गये? क्या मैरावण मेरे रूप में आया था? कहीं राम और लक्ष्मण को तो वह उठा न ले गया?" विभीषण ने पूछा। हनुमान ने अपनी कुंडली के भीतर झांककर देखा तो वहाँ पर सचमुच राम और लक्ष्मण न थे।

हनुमान हताश हो लुढ़क पड़ा। इस पर जांबवान ने उसे समझाया—"उठो, निराश मत होओ, सिवाय तुम्हारे और कोई भी व्यक्ति राम और लक्ष्मण की सहायता नहीं कर सकते।"

हनुमान ने विभीषण के द्वारा पाताल लंका में प्रवेश करने का मार्ग जान लिया, तब आसमान में उड़ा।

इस बीच विभीषण के रूप में राम और लक्ष्मण के पास पहुंचनेवाले मैरावण ने उन्हें छोटी प्रतिमाओं के रूप में बदल डाला, अपने वस्त्रों के भीतर छिपाकर पाताल लंका में प्रवेश किया। वहाँ पर चन्द्रसेना को राम तथा लक्ष्मण को दिखाकर बोला—"लो, यही तुम्हारा राम है! और यह उसका भाई लक्ष्मण है। कल काली माता को इन दोनों की बलि देकर मैं तुम्हारे साथ शादी करूंगा।" इन शब्दों के साथ राम और लक्ष्मण को बन्दी बनाया।

हनुमान पश्चिमी समुद्र के भीतर घुसकर चला गया। कमल की कली के रूप में रहकर अग्नि कण की भांति प्रज्वलित होनेवाले पर्वत को देखा। इसके बाद हनुमान उस पर्वत के शिखर पर पहुँचा, वहाँ पर एक छोटे से बिल को देख सूक्ष्म रूप में भीतर उतर गया। उस बिल से वह आखिर पाताल लंका के सिंहद्वार तक पहुँच गया।

एक महाबली युवक उस द्वार की रक्षा कर रहा था। बल एवं पराक्रमवाले उस द्वारपाल को देख हनुमान अत्यंत प्रसन्न हुआ। उसी वक्त उस युवक के प्रति हनुमान के मन में वात्सल्य का भाव उदित हुआ।

द्वारपाल ने सोचा कि उसका शत्रु थककर शिथिल हो गया है, वह उत्साह में आ गया। विकट अट्टहास करते बोला–"अरे मायावी! तुम मुझे साधारण व्यक्ति मानकर मेरे साथ युद्ध करने आये हो? जानते हो, मेरा नाम मत्स्य वल्लभ है। मेरे पिता वीर शिरोमणि हनुमानजी हैं।"

युवक के मुँह से ये शब्द सुनकर हनुमान को आश्चर्य के साथ क्रोध भी आ गया। वह दांत पीसते बोला–"अरे मछली पुत्र! हनुमान ब्रह्मचारी है, यह बात सारे लोकों को विदित है। ऐसे ब्रह्मचारी तुम्हारे पिता कैसे हो सकते हैं? इस तरह असत्य बोलने के अपराध में तुम्हारी मौत निश्चित है।" इन शब्दों के साथ हनुमान मत्स्य वल्लभ पर टूट पड़ा।

हनुमान अपनी ज़बर्दस्त मुट्ठी के आघात से द्वारपाल युवक का अंत करने ही जा रहा था तभी उसे ये शब्द सुनाई दिये–"स्वामी, आप जल्दबाजी में न आइये। कृपया थोड़ा शांत हो जाइए।"

हनुमान ने झट से सर घुमाकर देखा। विद्युतलता जैसी एक अनिंद्य सुंदरी उसकी ओर दौड़ते दिखाई दी। विस्मय के साथ देखनेवाले हनुमान के चरणों में प्रणाम करके वह युवती बोली–"इस युवक का कथन सर्वथा सत्य है। मेरा नाम

हालांकि हनुमान सूक्ष्म रूप में था, फिर भी उस युवक ने हनुमान को पहचान कर गरज कर पूछा–"अबे बताओ, तुम कौन हो? मेरी आँखों में धूल झोंककर सिंहद्वार को पार करना चाहते हो? लो, तुम्हारी मौत निकट आ गई है!" यों कहते हनुमान से जूझ पड़ा।

द्वारपाल के बल-पराक्रम पर चकित हो हनुमान मन ही मन सोचने लगा–"न मालूम यह युवक कौन है? पर मेरे बराबर युद्ध कर पा रहा है! ऐसे व्यक्ति को थोड़ा चकमा देकर अंत करना होगा।" यों सोचते थके हुए व्यक्ति के समान वह लुढ़क पड़ा।

सुवर्चलादेवी है। दक्षिण सागर मेरे पिता हैं। मैं असंख्य जलचरों की रानी हूँ। आप तो मुझे नहीं जानते, पर मैं आप को जानती हूँ। एक बार जब आप समुद्र को लांघ रहे थे, तब एक सिंहका आप की छाया को पकड़कर खींचने लगी थी, तब आप उसके साथ लड़ने को भी तैयार हो गये थे। उस वक़्त मैं मत्स्य शरीर के साथ समुद्र पर तैर रही थी। आप ने सिंहिका का वध किया और अपने भाल पर के पसीने की बूंद अपनी उंगली से झाड़ दिया। इस पर पसीने की वह बिंदु मेरे मुंह में गिर गई। मैंने उसे निगल डाला। इस कारण गर्भवती बनकर मैंने इस मत्स्य वल्लभ का जन्म दिया। इसलिए यह युवक आप ही का पुत्र है।"

हनुमान अब भी संभ्रम एवं आश्चर्य में डूबा हुआ था, तब सुवर्चला देवी ने हनुमान से यों कहा—"मत्स्य वल्लभ बचपन से ही साहसी था। महान पराक्रमशाली के रूप में बढ़नेवाले इसे मैरावण उठा ले गया और अपना दास बना लिया। दिव्यवाणी ने बताया था कि आप के दर्शन के द्वारा ही यह मुक्त हो सकता है। इस कारण आज से मत्स्य वल्लभ को दासता से मुक्ति मिल गई है।"

उसी वक़्त दिव्यवाणी सुनाई दी—"सुवर्चला ने जो कुछ कहा, सत्य है! मत्स्य वल्लभ हनुमान का ही पुत्र है।"

फिर क्या था, मत्स्य वल्लभ ने हनुमान को प्रणाम किया। हनुमान ने उसे ऊपर उठाया और अत्यंत वात्सल्य भाव से उसके साथ गाढ़ालिंगन किया।

पिता और पुत्र के इस मिलन को देख सुवर्चलादेवी बहुत ही प्रसन्न हुई और बोली—"मेरे देव! आप चन्द्रसेना के पास जाइए। वह मैरावण के प्राणों का रहस्य जानती है। वह सब प्रकार से आप की सहायता करेगी।" इन शब्दों के साथ सुवर्चला ने हनुमान को प्रणाम किया और मत्स्य वल्लभ को साथ लेकर चली गई।

प्रतीकार

कई शताब्दियों के पूर्व उत्तर भारत के राज्यों पर विदेशी हमले हुआ करते थे। वे युद्ध अत्यंत भयंकर और अमानवीय होते थे। कभी कभी विदेशी हमलवार भारतीय दुर्गों को तोड़ देते, कभी उन्हें पराजित कर देते।

बग्दाद में रहनेवाले खलीफ़ा के प्रतिनिधि के रूप में अल हृजाज टर्की तथा ईरान देशों पर शासन करता था। उसने सिंधु राज्य पर अपने सैनिकों द्वारा कई बार हमले कराये, पर हर बार वे पराजित होते रहें। उस वक्त सिंधु का राजा दहीर था।

आख़िर अल हुजाज का दामाद महम्मद कासिम सेनापति बना। वह साहसी तथा मेधावी था। अनेक दिनों तक युद्ध करके वह सिंधु राजा के दुर्ग को भेद सका।

उस युद्ध में सिंधु के राजा व राजकुमार मर गये। रानी और उसकी बहुओं ने चिता में कूदकर आत्माहुति की।
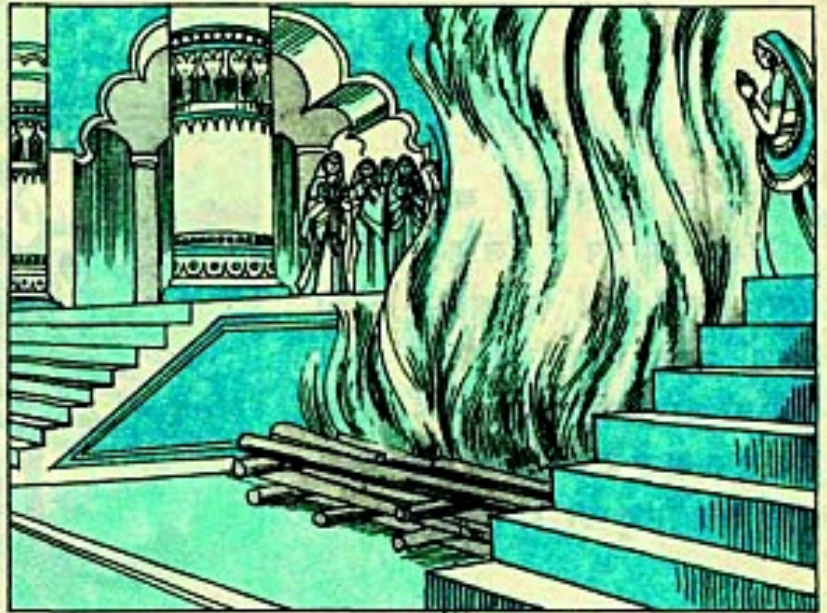
मगर राजा की दो सुंदर राजकुमारियाँ अग्नि की आहुति होने के पहले कासिम के हाथ में पड़ गईं।

सेनापति ने राजा का ख़ज़ाना लूटा और अपने देश को लौट पड़ा। दो राजकुमारियों को अपने साथ ले जाते हुए उसने अत्यंत गर्व का अनुभव किया।

सेनापति कासिम ने राजकुमारियों को अपने ससुर अल हजाज के हाथ सौंप दिया, तो उसने उन राजकुमारियों को ख़लीफ़ा के पास भेजा। ख़लीफ़ा उनके सौंदर्य पर मुग्ध हुआ, उन्हें अपने जनानेखाने में रखा और सेनापति को एक दूर प्रदेश का शासक नियुक्त किया।

थोड़े दिन बाद ख़लीफ़ा ने घोषणा की कि वह उन राजकुमारियों के साथ विवाह करने जा रहा है। इस पर राजकुमारियों ने कहा–"हमारे साथ सेनापति ने रास्ते में ही शादी कर ली है! क्या अपनी पत्नियों का अपने मालिकों को भेंट देने का रिवाज़ आप के देश में है?"

इस पर ख़लीफ़ा क्रोध में आ गया। उसने दूर प्रदेश में रहनेवाले कासिम को बुला लाने के लिए अपने सेवकों को आदेश देते हुए कहा–"मैं उसे प्राणों के साथ नहीं बल्कि उसका शव ही देखना चाहूँगा।"

ख़लीफ़ा का आदेश अमल किया गया। कासिम का शव जब ख़लीफ़ा के सामने लाया गया, तब राजकुमारियाँ बोलीं–"ख़लीफ़ा साहब! सेनापति कासिम ने हमारा स्पर्श तक नहीं किया है। हमारे पिता की मृत्यु तथा उनके वंश के निर्मूलन का हमने प्रतिकार लिया है, बस!"
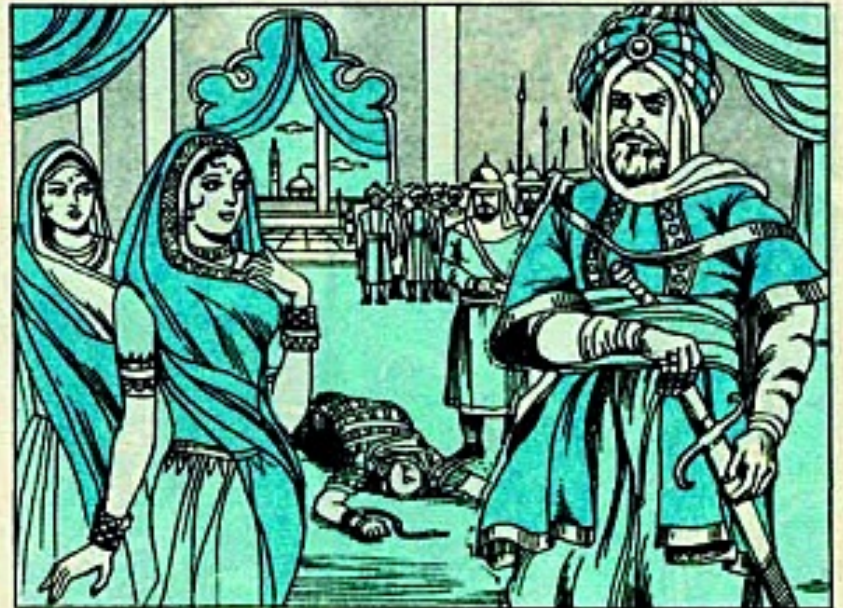
धोखा खानेवाला ख़लीफ़ा चिल्ला उठा और राजकुमारियों का वध कराया, इसके लिए वे दोनों पहले से ही तैयार थीं। कासिम को मरवा डालने की चिंता में घुल-घुलकर ख़लीफ़ा भी जल्द ही मर गया।

कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता

कहानी का सुंदर शीर्षक देकर रु. २५ जीतिए!

?

हसन और अली नामक दो अरब निवासी एक बकरी को लेकर झगड़ पड़े। दोनों बकरी को अपनी-अपनी बताने लगे। उनका विवाद बढ़ता गया। इसे देख जान-पहचान वालों ने उन्हें सलाह दी कि वे लोग न्यायाधिकारी जुहा के पास जाकर शिकायत करे।

जुहा ने उनसे पूछा–"आखिर तुम्हारे झगड़े का क्या कारण है?"

"सरकार! यह बकरी बचपन से मेरे घर पली। इसे मैंने ही पालकर बड़ा किया। एक दिन अचानक यह बकरो गायब हो गई। मैंने उसे बताया कि तुमने मेरी बकरी की चोरी की है, मगर अली बताता है कि मेंने उसकी बकरी को चुराया है। यह बड़ा ही झूठाखोर है।" हसन ने निवेदन किया।

अली ने भी यही बताया कि वह बकरी बचपन से उसी के यहाँ पली है। इस बीच हसन ने इसे हड़प लिया है।

जुहा ने दोनों फ़रियादियों के चेहरों की ओर ध्यान से देखा, तब यों फ़ैसला सुनाया–"सब कोई यह जानते हैं कि दो व्यक्ति दीर्घ काल तक एक साथ रहें तो उनके बीच समान रूप-रेखाएँ बन जाती हैं। आप लोग अली का चेहरा देखिए! बिलकुल बकरी के चेहरे जैसे है न? इसलिए यह बकरी अली की है?" यों फ़ैसला सुनाकर अपने गधे पर सवार हो निकल पड़ा।

हसन का क्रोध भड़क उठा। उसने जुहा को देख कहा–"बात सच है, इसलिए जुहा और इस गधे–इन दोनों में सचमुच कौन गधा है, समझ में नहीं आ रहा है।"

★ ★ ★

उपर्युक्त कहानी के लिए बढ़िया शीर्षक कार्ड पर लिखकर, निम्न लिखित पते पर भेजें–"कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता", चन्दामामा, २ & ३, आर्काट रोड़, मद्रास-६०००२६

कार्ड हमें अप्रैल १० तक प्राप्त हों और उसमें फोटो-परिचयोक्तियाँ न हों। इसके परिणाम चन्दामामा के जून '७७ के अंक में घोषित किये जायेंगे।

फ़रवरी मास की प्रतियोगिता का परिणाम: "समझदार को इशारा काफी है"

पुरस्कृत व्यक्ति: श्री इन्द्रजीत वर्मा, ५/३ चावला हाउस, बालूगंज, शिमला-१७१००१

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ जून १९७७ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

T. V. Seshagiri

★

D. N. Shirke

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ अप्रैल १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

फ़रवरी के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : **भूख मिटाता सब संसार**

द्वितीय फोटो : **कितने पाते माँ का प्यार?**

प्रेषक : अनिल भाटिया, १२/७२ पंजाबी बाग, नई दिल्ली

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras 600 026 : Controlling Editor : NAGI REDDI
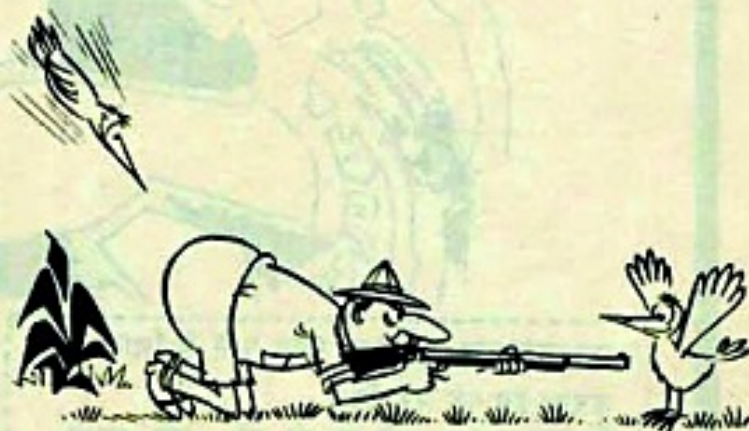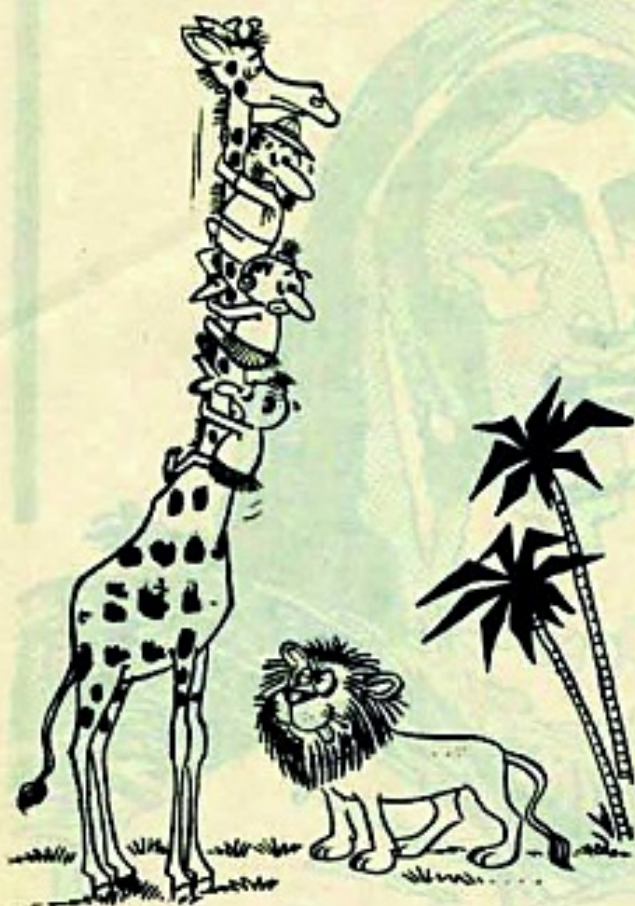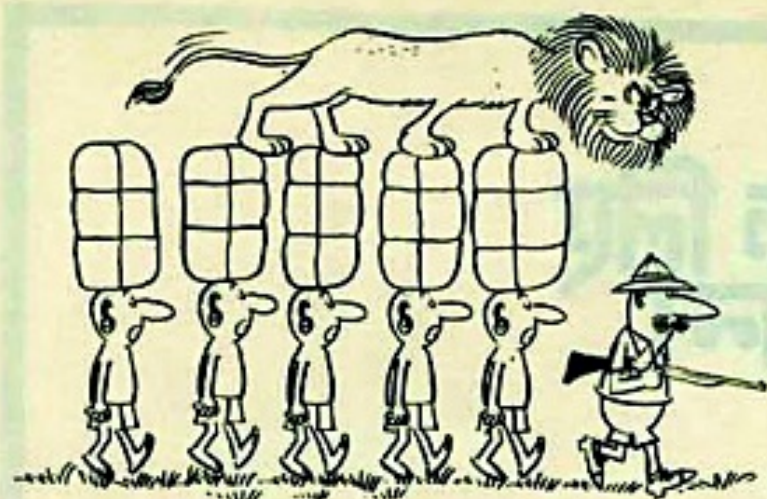
आगे बढ़ता देश हमारा
अधिक लोगों के लिए ज्यादा खाद्यान्न
अनुमान है कि इस वर्ष खाद्यान्नों की अब तक की सबसे अधिक, 11 करोड़ 40 लाख टन उपज होगी।
देश में सार्वजनिक वितरण व्यवस्था को बहुत सुधार दिया गया है और अब इसे विश्व में सबसे अच्छा समझा जाता है।
दृढ़ संकल्प और कड़ी मेहनत से हम और बढ़ेंगे
खाद्यान्न पुस्तिका मुफ्त पाने के लिए
कृपया इस पते पर लिखें :
वितरण प्रबंधक, डी०ए०वी०पी०, 'बी' ब्लाक,
कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली-110001.

दूध
से बना हुआ
ASOKA
GLUCOSE
असोका
ग्लूकोज
मिल्क बिस्कुट
ASOKA
GLUCOSE
IS-1011
ISI
AB
असोका बिस्कुट वर्कस हैद्राबाद (आँध्र प्रदेश)
BREEZE ABW 6 70